अ नु क्र म

प्यारे बापू

[स्वराज्य की ओर]

आर्थिक समस्या का हल : खादी : १ :

विद्यार्थियों द्वारा प्रचार

यूरोप लड़ाई की ज्वालाओं में लिपट चुका था। ईर्ष्या-द्वेष से प्रेरित यूरोप के निवासी अपने प्यारे बेटों को ईंधन की तरह उस जलती आग में झोंक रहे थे। भयानक चिनगारियाँ उठ रही थीं।

इस अग्नि को बुझाने के बदले यूरोप के देश पागल की तरह इसी होड़ में लगे थे कि कौन सबसे ज्यादा खतरनाक शस्त्र तैयार कर सकता है। जब से इस देश में मनुष्य-जाति का उदय हुआ, तब से कभी भी उसने इतने सर्वनाश का मार्ग नहीं पकड़ा था।

ऐसे समय में ईर्ष्या-द्वेष से दूर गांधीजी अपने आश्रम में बच्चों को प्रेम सिखाने और उन्हें मारने नहीं, खुद मर मिटने की हिम्मत दिलाने में लगे थे। साथ ही

उनके साथियों के सारे प्रयत्न भारत को आजाद बनाने के लिए हो रहे थे, लेकिन उनके औजारों से आग पैदा नहीं होती थी। प्रेम और समझौता ही उनके हथियार थे।

महायुद्ध के दिनों में गांधीजी को एक नयी विजय प्राप्त हुई। तेईस साल की लड़ाई के पश्चात् हिन्दुस्तानी मजदूरों को आजादी से दक्षिण अफ्रीका जाने की इजाजत मिल गयी थी। भविष्य में उन्हें गुलाम की तरह स्वीकृति नहीं लेनी पड़ेगी।

जब यात्रा और प्रचार करने का समय आता, तो गांधीजी अपने साथियों को बुलाते और जाने के पहले उन्हें आशीर्वाद देते थे कि "जाइये, चारों ओर घूमिये और दूसरों को वे सब बातें सिखाइये, जो आपने सीखी हैं।"

इसके बाद वे पीठ पर सामान लादकर सड़कों पर निकल पड़ते थे। उनका मुख्य काम अपने कामों में व्यस्त किसानों से मिलना था, उनके कार्य में मदद करना था और उन्हें सत्य की सीख देनी थी।

विद्यार्थियों को उपदेश

गांधीजी चाहते थे कि दूसरों को शिक्षा देने के पहले उनके विद्यार्थी मातृभूमि की सेवा करना सीखें। वे उनसे कहते थे : "सबसे पहले आप यह देखिये कि नदियाँ कैसे बहती हैं? पक्षी कैसे गाना गाते हैं? याद

रखिये कि आपको जंगली पशुओं से मिलकर शांति स्थापित करनी है। पशुओं के बराबर ज्ञान यदि आपको नहीं है, तो आप कैसे चाहेंगे कि लोग आपकी बातों पर विश्वास करें और उन्हें मानें ? इसलिए पहले पशुओं के पास जाकर शिक्षा लो। वे बड़े बुद्धिमान् होते हैं। आप जंगलों में घूमिये, पहाड़ों पर चढ़िये, रात को खुले आकाश के नीचे सोइये। तारों और उज्ज्वल सूर्य के प्रकाश से अपना मार्ग पहचानना सीखिये। यह न भूलिये कि प्रकृति में हर काम नियत समय पर होता है।

"यदि कभी जंगल के बीच रात के समय आप पक्षियों की आवाज सुनें और नींदभरी आँखों से अपने चारों ओर जंगल के अन्धकार में चमकती हुई रोशनी देखें, तो डरें नहीं! ये भूत-प्रेत नहीं, बल्कि आपके जंगली भाई हैं। ये आपसे प्रश्न पूछते हैं।

"उस समय दीपक जलाइये। आपके ये भाई, जिन्हें लोग भयंकर पशु मानते हैं, समझेंगे कि आप उनके मालिक हैं। वे आपको शांति से सोने देंगे।

"आप वंशी या सितार अपने साथ ले जाइये। सभी पशु संगीत-प्रेमी होते हैं। संगीत के द्वारा हम कितने ही भाइयों को जीत सकते हैं।

"यदि कभी ऐसा हो कि कोई बन्दर पेड़ से कूदकर आपका नाश्ता, आपका एक केला छीनने की कोशिश

करे, तो नाराज न होइये। उसका स्वधर्म, उसका स्वभाव और उसकी प्रकृति ही चोरी करने की है। उसे कहाँ ऐसे शिक्षक मिलेंगे, जो भले-बुरे की शिक्षा दें।

"यदि कभी आप हाथी पर सवार हों, तो उसे अकारण मारें नहीं। आपके अन्याय को वे याद रखेंगे और मौका आने पर आपको भी सतायेंगे।

"लेकिन मुख्य बात तो यह है कि आप कभी भय का शिकार न बनें। सच्चा सत्याग्रही, जिसने अपने को सत्य की खोज में लगा दिया है, इस नीच वृत्ति से हमेशा ही अपरिचित रहता है।

"जंगली जानवरों से पूरी शिक्षा लेने के बाद आप अपने सबसे अधिक दुःखी भाइयों—किसान-मजदूरों की ओर बढ़िये। उनके घरों और उनके जीवन में प्रवेश करने के पहले खेतों में जाकर उनके काम का अध्ययन कीजिये। धानों के बड़े-बड़े दलदल देखने जाइये। देखिये कि घुटनों तक पानी में खड़े होकर तेज धूप में किसान किस प्रकार दिनभर काम करते हैं।

"तब आप लोग कान खोलकर सुनिये कि किस प्रकार ये लोग अपने श्रम के गीत गाते हैं। आप उनके संगीत से ही जान लेंगे कि उनकी आत्मा कितनी निराश है और उनका शरीर कितना आहत है।

"बड़ी-बड़ी नदियों के किनारे पर बैठकर नाविकों

के गीत सुनिये। उनके तैरते हुए बगीचे प्रवाह में बह रहे हैं। ये पतवार चलाते हुए कैसे गीत गाते हैं। उनके दुःख से उनके बगीचों के सब मीठे फल कड़ुवे बन गये हैं।

"यह सब देखने के बाद जब आपको महसूस हो कि आपके हृदय से रक्त बह रहा है, वह फूटा पड़ रहा है और आप अपने भाइयों के सभी प्रकार के सुख-दुःख में शामिल होने को आतुर हैं, जब आप समझ लें कि हर पौधे के पास भी अपना निजी जीवन और संगीत है, और आप सब इन बातों पर विचार करने लगें, तब आप गाँवों में प्रवेश कीजिये। तब लोगों को उपदेश देने का समय आयेगा और तभी लोग आपकी बात मानेंगे।"

इस प्रकार गांधीजी अपने साथियों को समझाया करते थे।

गाँव में विद्यार्थियों का प्रवेश

लेकिन उनका काम आसान नहीं था। संसार के अन्य किसानों के विपरीत हमारे देश के किसान अज्ञान और गरीबी में समय बिताते हैं। उनके मकान मिट्टी और गोबर के बने हैं। वर्षा के दिनों में ये अपनी बकरियों और मुर्गियों के साथ उन्हींमें रहते हैं। स्वास्थ्य के नियमों से ये अपरिचित हैं। ये भूखे हैं और दुःखी हैं। बहुत-से लोग इन दुःखों से बचने के लिए ताड़ी पीने लगते हैं।

कभी-कभी स्वयंसेवक लोग इन्हें बड़ी बुरी हालत में पाते थे। दुःखों की मार से मानो ये मनुष्य ही नहीं रह गये थे। गरीबी और बीमारी के सामने ये हार जाते थे। एक तरफ मलेरिया, दूसरी तरफ पेचिश इन्हें घेरकर मृत्यु की ओर ढकेलते।

कैसे आशा की जाय कि ये लोग सत्य को पहचानेंगे! गाँववालों की ऐसी दशा देखकर विद्यार्थियों को गांधीजी के शब्द याद आते :

"हमें अपने आचरण द्वारा सत्य का उदाहरण पेश करना है।"

हाथ में झाड़ू लेकर ये लोग गाँव में सफाई करने लगते थे। रास्ते में झाड़ू लगाते थे। पाखानों को धोते थे। गड्ढों को, नालियों को साफ करते थे। गरीबों और बीमारों की झोपड़ियों में जाते थे। यह सब देखकर गाँव-वाले भी शर्म के मारे इन कामों को करने लगते थे। थोड़े दिनों में सारा गाँव साफ और सुहावना बन जाता था।

आश्रम के विद्यार्थी किसानों के कामों में भी शामिल होते थे। ये अपनी आजीविका के लिए खेती का काम करते थे। फसल काटने और गोड़ने में वे किसानों की मदद करते थे। जब बाहर का काम न होता, तो वे किसानों को कताई-बुनाई का काम सिखाते थे। उन्हें बुरे व्यसनों

से होनेवाली हानि के बारे में समझाते थे। धीरे-धीरे किसानों में उनके प्रति विश्वास पैदा हो गया।

जब उनका पेट फूल जाता अथवा उनका मुँह सूख जाता, तो वे स्वयंसेवकों को बुलाते थे। विद्यार्थी उन्हें कुनैन पिलाते थे, उनकी दवा करते थे। धीरे-धीरे उनकी सूरत बदल जाती थी। जब किसी किसान को चोट लग जाती, तो स्वयंसेवक उसकी सेवा करते थे, वे उनकी मरहम-पट्टी करते थे। वे सभी स्त्री-पुरुषों को रोज नहाने का महत्त्व बताते थे और खुद बड़े तड़के ही नदी में नहाने जाते थे।

विद्यार्थियों के ऐसे प्रत्यक्ष आचरण से बड़ा चमत्कार होता था। किसान लोग उनकी बातों को मानने लगते थे। वे शराब पीना बन्द कर भट्ठियों को तोड़ देते और सफाई से रहने लग जाते थे।

जहाँ भी ये स्वयंसेवक जाते, वहाँ के गाँवों की शक्ल ही बदल जाती थी।

कस्तूरबा : देहात में

जब स्वयंसेवक यात्रा पर निकलते थे, तो आश्रम के कार्यकर्ता भी बाहर निकल पड़ते थे। यदि किसी इलाके में अकाल पड़ जाता था, तो वे सहायता करने के लिए दौड़ पड़ते थे।

पंजाब में या खेड़ा में, कहीं भी यदि ब्रिटिश सरकार मजदूरों को निकालती, तो ये लोग तुरत वहाँ पहुँच जाते और समझौता करने के प्रयत्न में लग जाते। उनकी पत्नियाँ भी ऐसे कामों में मदद देती थीं। जिन गाँवों में पाठशाला नहीं थी, वहाँ छप्पर डालकर पाठशाला शुरू कर दी जाती। कभी-कभी गाँववाले इन स्त्रियों से भी वैसा ही कठोर व्यवहार करते थे, जैसा स्वयंसेवकों और कार्यकर्ताओं के साथ करते थे।

एक बार लोगों ने गांधीजी की पत्नी कस्तूरबा की झोपड़ी को जला दिया। कस्तूरबा को नयी पाठशाला बनाकर दुबारा काम शुरू करना पड़ा। अबकी दफा आग के डर से उन्होंने पाठशाला पत्थर की बनायी थी।

कभी-कभी किसान लोग कार्यकर्ताओं की पत्नियों की हँसी उड़ाते थे। फिर भी वे कभी हिम्मत नहीं हारती थीं और प्रेम तथा धीरज से अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेती थीं।

एक बार कस्तूरबा ने सोचा कि उनके बार-बार समझाने पर भी एक ग्रामीण बहन अक्सर गन्दी रहती है। उन्होंने निश्चय किया कि वे उसे अलग ले जाकर बातचीत करेंगी।

कस्तूरबा के समझाने पर वह ग्रामवासिनी गद्गद हो उठी। उसने कस्तूरबा को अपनी झोपड़ी में बुलाया।

"देखिये बहनजी" उसने कहा : "मेरे पास कुछ भी नहीं है। न कपड़े हैं, न आलमारी। यदि मेरे पास बदलने के लिए एक जोड़ी कपड़े होते, तो मैं कसम खाकर कहती हूँ कि मैं कभी भी गन्दी न रहती। फिर मैं रोज कपड़े बदलकर धो सकती थी। लेकिन उसका कोई उपाय ही नहीं। इस कपड़े को धोऊँ, तो जब तक वह सूखे नहीं, तब तक मुझे नंगी रहना पड़ेगा।"

ऐसी है हमारे गाँवों की हालत !

खादी का विचार-प्रचार

इस प्रकार जितनी ही घटनाओं का अनुभव होता गया, गांधीजी का विचार भी दूसरों की सेवा के लिए उतना ही पक्का होता गया। वे कहते थे :

"यदि हम जिन्दा रहना चाहते हैं, तो हमें कातना सीखना ही पड़ेगा। और कोई दूसरा हल है ही नहीं।"

अपनी लम्बी यात्राओं में गांधीजी किसानों को समझाते थे कि "आप लोग करघे पर बैठिये। आपके बाल-बच्चे चरखा कातेंगे। यह तो खेल ही खेल है। अपने हाथ से अपने कपड़े बना लेने से काफी रुपये बचेंगे। फिर आपको दूर देश से आया हुआ महँगा कपड़ा खरीदने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

"अपने हाथ से कातकर जो खादी आप तैयार करेंगे, वह बड़े शहरों में भी बिक जायगी। लोग उसे चाव से खरीदेंगे। शुरू-शुरू में खादी इसलिए बिकेगी कि वह मिलों के कपड़े से कहीं अधिक सुन्दर होती है। बाद में वह इसलिए बिकेगी कि इससे हमारे देश की रक्षा होगी।"

गांधीजी के समझाने से ज्यादातर किसान बड़ी खुशी से कातने को तैयार होते थे। फिर भी कुछ किसान इस बात को ठीक से नहीं समझते थे। वे कहते थे: "हमें मिलों में काम करना ज्यादा अच्छा लगता है। हमें मिलों में काम दिलाइये।"

तब गांधीजी उन्हें बताते कि "मिल में काम करने के लिए आपको अपने परिवार को छोड़कर बड़े शहर में जाना पड़ेगा, जहाँ हवा में कोयला और सड़े हुए तेल की बदबू होती है। वहाँ आप पूरे गुलाम बन जायेंगे। दिनभर आप बड़े-बड़े कमरों में बन्द रहेंगे, गरमी से आप परेशान रहेंगे। आपका सारा खून पसीना बनकर बह जायगा। आपकी सारी जिन्दगी एक चक्की को घुमाने में या हथौड़ा चलाने में बीत जायगी। यदि किसी दिन आप बीमार पड़ जायेंगे, तो आपका मालिक आपको निकाल देगा, क्योंकि हजारों मजदूर आपकी जगह काम करने के लिए तैयार हैं। आप लोग सिर उठाकर आकाश की ओर ताक भी नहीं सकेंगे। आप मशीन के गुलाम बन जायेंगे।

ये सब बातें सरकारी खुफियों को पसन्द नहीं थीं। ये जनता के जोश से डरते थे, लेकिन गांधीजी अपना काम जारी रखते थे। वे जनता को एक महान् युद्ध के लिए तैयार रहने और आत्मशुद्धि करने का संदेश देते थे :

"ब्रिटेन आपसे अन्यायपूर्ण कर माँगता है। आप इतना कर नहीं दे सकते, यह ठीक है। पर आप कर वसूल करनेवालों पर नाराज क्यों होते हैं? क्या आप नहीं जानते, कर वसूल करनेवाले और उसे लेनेवाले एक ही नहीं हैं? ये लोग तो सिर्फ नौकर की तरह उगाहने आते हैं। ब्रिटिश सरकार उन्हें वेतन देती है। आप उन वेचारे नौकरों पर हाथ न चलायें।"

"लेकिन जब हम कर दे नहीं सकते, तो हमें क्या करना चाहिए?"

जब गांधीजी ने यह महसूस किया कि ब्रिटिश सरकार के कानून दरअसल न्यायपूर्ण नहीं हैं, तो वे शांति-मय प्रतिरोध यानी सत्याग्रह का संदेश देने लगे :

"आप काम करना छोड़ दीजिये। अब से ब्रिटिश सरकार को आप कोई भी सहयोग न दें।" सवाल उठा कि "यदि हम काम छोड़ दें, तो हम भूखों मर जायेंगे। गोरी पलटन हमें मार देगी।"

तब गांधीजी जनता को समझाने लगे कि "बिना बलिदान के अच्छे लक्ष्य में सफलता नहीं मिल सकती।

हमें भूखों मरना पड़े, हम सशस्त्र अन्याय का शिकार बनें, इसमें कोई हर्ज नहीं। गेहूँ का बीज जब मरता है, तभी सुनहरी बाल निकलती है।

"यदि हम ब्रिटेन को समझाना चाहें, तो हिंसा द्वारा हम उस पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकते। विलायती लोहा हमारे प्रेम से तथा हमारे खुद ही तकलीफ़ सहने से पिघलेगा।"

इस तरह गांधीजी ने हिन्दुस्तान को सत्याग्रह के लिए तैयार किया। ● ● ●

भारत में सत्याग्रह

लड़ाई में सहयोग

इसी समय सर्वशक्तिशाली ब्रिटेन ने भारत से सहायता की पुकार की। यूरोप में लड़ाई बराबर जारी थी। विलायत अब खुद खतरे में था। विलायती राजनीतिज्ञों ने भारत को याद किया। प्रधानमंत्री लॉयड जॉर्ज ने वचन दिया :

"यदि आप इस लड़ाई में विलायत का साथ देंगे, तो हम आपको आजादी देंगे। हमें मदद दीजिये। हम आपको आजाद करेंगे।"

ब्रिटेन के इन वादों ने देश को भुलावे में डाल दिया। इस विचार से कि देश आजाद हो जायगा, लोगों पर नशा-सा चढ़ गया। लोग भूल गये कि दुनिया में मनुष्य के जीवन से अधिक कीमती कोई भी चीज नहीं है। शान्ति और प्रेम के उपासक गलत रास्ते पर चल पड़े। हिन्दुस्तान के लोगों ने यूरोप की लड़ाई में भाग लिया। बाद को गांधीजी को बड़ा दुःख हुआ।

"मारे बिना मरने की हिम्मत आनी चाहिए। हिंसा

कायरों का अस्त्र है। बलवानों का अस्त्र तो अहिंसा और प्रेम ही है।"

उस समय जरूर भूल हो गयी थी।

गांधीजी ने १०,००,००० हिन्दुस्तानियों को आजादी के नाम से मरने के लिए लड़ाई में जाने दिया।

विलायत का धोखा

लेकिन ज्यों ही लड़ाई खतम हुई, ब्रिटेन अपने वचनों को भूल गया। उसने कहा :

"हम आप लोगों को आजादी नहीं देना चाहते। आप लोगों की आबादी ३५,००,००,००० है और आप लोग हमारा ही काम करते हैं। हम आपको आजादी देने की बेवकूफी क्यों करें?"

यह सुनकर हिन्दुस्तान काँप उठा। लोग कहने लगे :

"अब हम ब्रिटेन से ही लड़ाई लड़ेंगे। उसने हमें धोखा दिया। हमारी सन्तान व्यर्थ में बलिदान हुई। अब हम जिन्दगीभर विलायत से लड़ते ही रहेंगे।"

गांधीजी ने देखा कि हमारे भाइयों के हृदय में द्वेष ने प्रवेश किया है। उन्होंने दुबारा उन्हें समझाया :

"भाइयो! अपने पुराने गुरु पर विश्वास कीजिये। हिन्दू-मुसलमान, गरीब-अमीर, ब्राह्मण-हरिजन एक हो जाइये और एक होकर एक बड़ी लड़ाई की तैयारी

कीजिये। विश्वास रखिये कि शांति और प्रेम से हम विजय पायेंगे। हम विलायत की अन्तरात्मा को हरा देंगे।"

दो साल तक गांधीजी ने हिन्दुस्तान के गाँव-गाँव, नगर-नगर में अहिंसा का सन्देश देने के लिए दौरा किया।

कितनी ही वार ऐसा लगा कि उनका खून उबल रहा है और उनका हृदय शेर के हृदय की तरह गरज रहा है; लेकिन उनकी आन्तरिक आवाज अडिग और पवित्र थी। वह कहती थी :

"तुम्हारे देशवासी अभी तक कच्चे हैं। वे अभी तक क्रोध के वश में हैं।"

आन्तरिक आवाज सच कहती थी। दुःख से पीड़ित होकर कुछ भाइयों ने अपमान का उत्तर अपमान से ही दिया, इसलिए गांधीजी अब तक आम सत्याग्रह की घोषणा नहीं कर सके थे।

जनता के दुःख से और उसकी गरीबी से दुःखी होकर गांधीजी वार-वार बीमार पड़ जाते थे। एक वार तो उन्हें ऐसा लगा कि यमराज ने आकर पुकार की है।

वे इतने कमजोर हो गये थे कि न तो वे पढ़ सकते थे और न बोल सकते थे। विद्यार्थी लोग उन्हें पढ़कर सुनाते थे। वे कमजोर होते गये। उनका खाना बन्द हो

गया था। वे सोचने लगे कि अब मैं मौत से बच नहीं सकता।

लड़ाई तो खतम हो गयी थी। ब्रिटिश सरकार हिन्दुस्तान के लिए कुछ नहीं करना चाहती थी। पर गांधीजी को स्वप्न में भी यह विचार नहीं आया कि ब्रिटेन हमें और अधिक दुःख देना चाहता है।

एक दिन शाम को, जब गांधीजी की तबीयत बहुत खराब थी, तब एक मित्र उनसे मिलने आये।

वे कहने लगे : "बापू, अभी मरने का समय नहीं आया। ब्रिटेन ने हमारे विरुद्ध कुछ नये कानून बनाये हैं। विलायतवाले आपके बच्चों को पकड़ रहे हैं, उन्हें जेल में डाल रहे हैं और पीट रहे हैं। उन लोगों में रत्तीभर भी दया नहीं रह गयी है। बापू, उठिये! कमर कसकर हिन्दुस्तान की रक्षा के लिए आगे आइये।"

यह सुनकर गांधीजी के हृदय में एक नयी शक्ति का संचार होने लगा। वे बोले : "मैं तैयार हूँ! मैं तैयार हूँ! मैं उठूँगा!"

गांधीजी उठे और थोड़े ही दिनों में वे स्वयं ही आन्दोलन का सञ्चालन करने लगे।

सत्याग्रह का आरम्भ

इसके बाद गांधीजी ने सारे हिन्दुस्तान का दौरा किया।

"हम आम सत्याग्रह की घोषणा करेंगे। आप लोग सहमत हैं न ?" उन्होंने अपने साथियों से पूछा।

सब हिन्दू-मुसलमानों ने एक स्वर से कहा : "हाँ, हम तैयार हैं।"

गांधीजी बोले : "लेकिन इस शांतिमय युद्ध की तैयारी करने के पहले शोक-चिह्न के तौर पर हम सारे हिन्दुस्तान में हड़ताल करवायेंगे।"

उनके साथियों ने कहा : "हाँ-हाँ, ठीक है। हड़ताल अवश्य होनी चाहिए।"

सारे देश में हड़ताल हुई। मजदूरों ने काम से छुट्टी ली। सब दूकानें बन्द रहीं। सब लोगों ने उपवास करके आत्मशुद्धि का प्रयत्न किया। बड़े-बड़े जुलूस निकले। यह अद्भुत प्रभावशाली दृश्य था। सारा देश भजन और प्रार्थना के द्वारा हृदय शुद्ध करके इस बड़ी कसौटी की तैयारी कर रहा था।

लेकिन गोरी पुलिस ने इसमें बाधा डाली। इस हड़ताल में निर्दोषों का खून बहा। गोरी पुलिस के घोड़ों ने स्त्रियों के पेट चीर दिये। छोटे बच्चे दब गये। घुड़सवारों ने अपना भाला हिलाकर उस निरस्त्र भीड़ पर प्रहार किया। यह तो घोर अन्याय था। दूसरे दिन दुःखी भारत हाथ मोड़कर विलायती सरकार से दूर हट गया।

"हमें मारिये, हमें कुचलिये। अब हम ब्रिटेन से मिलकर काम नहीं करना चाहते।"

हिन्दुस्तानी उच्चाधिकारियों ने अपने पदों को छोड़ दिया। बनियों ने अपनी दूकानें बन्द कर दीं। वकील और न्यायाधीशों ने कचहरी जाना छोड़ दिया। मजदूरों, खानों के मजदूरों और कुलियों ने हड़ताल कर दी। सब व्यापार बन्द हो गया।

गांधीजी गिरफ्तार हुए, लेकिन बाद में वे छोड़ दिये गये। उनके साथी गिरफ्तार हो गये। जेल भर गये थे।

जनता काबू के बाहर हो गयी। लोगों ने अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठायी। तब ब्रिटिश सरकार ने फौजी कानून लागू कर दिया। हिन्दुस्तानी लोग घबड़ा गये।

लेकिन गांधीजी ने कहा: "यदि हमारी तरफ से थोड़ी भी हिंसा हुई, तो हम अपने विपक्षियों को एक अच्छा बहाना दे देंगे, जिससे वे सौ गुनी शक्ति से इसका फायदा उठायेंगे।"

जनता ने गांधीजी की बात न मानी। गांधीजी ने समझ लिया कि हिन्दुस्तान की जनता अभी तक अहिंसा के लिए पूरे तौर से तैयार नहीं है। व्यापक सत्याग्रह का मौका न मिलने से उनका हृदय टूट गया। उन्होंने

घोषणा कर दी : "फिलहाल सत्याग्रह-आन्दोलन बन्द कर दिया जाय।"

यह घोषणा करके गांधीजी अपने आश्रम को लौट गये। गोरी पुलिस को उनके पीछे वहाँ आने में देर न लगी।

उन्होंने गांधीजी को दुबारा पकड़कर जेल में डाल दिया। उस समय जनता को वे आदेश देकर आये कि वह फिर काम पर जाय।

यह सही है कि उन्होंने जनता से फिर काम शुरू करने के लिए कहा था, लेकिन वे निराश नहीं हुए थे। उन्होंने कहा : "भाइयो, आपके कुछ साथियों ने वचन-भंग कर दिया है। कुछ लोगों ने अंग्रेजों के खिलाफ हाथ उठाया है। जब तक आपके बीच में एक भी व्यक्ति अंग्रेजों के खिलाफ हाथ उठानेवाला रहेगा, तब तक मुझे व्यापक सत्याग्रह चलाने का अधिकार न होगा। मुझे यह बात फिर दुहरानी है कि हम अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई नहीं चला रहे हैं। हम सिर्फ अपने बलिदान और त्याग द्वारा उन्हें उनकी गलतियों का ध्यान दिलाना चाहते हैं। सत्याग्रह करने में हमें सतत इन सब बातों का ध्यान करना पड़ता है। दिन-दिन हमें हिम्मत की आवश्यकता है।

"यदि एक भी व्यक्ति हिंसा की तरफ झुकता है,

तो हमारे सत्याग्रह पर धब्बा लगता है। फिर वह पवित्र अस्त्र नहीं रह जाता है। फिर वह सत्याग्रही का यानी सत्य के पुजारी का अस्त्र नहीं रह जाता। यदि हम हिंसा में पड़ गये, तो हमारे सत्याग्रह में तथा हमारे दुश्मनों के तरीके में फर्क ही क्या रह जायगा? इससे सत्याग्रह की सारी शक्ति नष्ट हो जायगी।

"भाइयो, मुझे लगता है कि ब्रिटिश सरकार मुझे गिरफ्तार करके आपके बीच से उठा ले जायगी। आप लोग सचेत रहियेगा, बहादुर बने रहियेगा और शान्त रहियेगा। अपने क्रोध पर काबू रखियेगा, क्योंकि यदि आप शांति-भंग करेंगे और हिंसा में फँसेंगे, तो हमारे दुश्मन खुशी से चिल्ला उठेंगे, 'गांधी मर गया, लोग उसे भूल गये'!

"वे जब ऐसा कहें, तो उनसे कहिये कि 'हमारा गांधी जेल में है। अब न तो गांधी सूरज को देख सकता है और न तो अपने भाइयों के कष्ट को ही; लेकिन वह हमारे हृदयों में विद्यमान है। गांधी हमारे बीच में जीवित है। उसने हमें अहिंसा सिखायी है। हम आपके खिलाफ हाथ नहीं उठायेंगे'।

"तब आपके प्रेम और सत्य से आपकी विजय होगी। ब्रिटेन इस बात को मान लेगा।"

गांधीजी ने अपने साथियों को यह संदेश दिया।

१० मार्च १९२२ की शाम को एक अफसर ने आकर गांधीजी को गिरफ्तार कर लिया।

गांधीजी पर कानूनी कार्रवाई

अंग्रेज न्यायाधीशों को मनुष्य के मूल्यों का ऊँचा खयाल था। उन्होंने बड़े आदर से गांधीजी को विलायती सरकार का दृष्टिकोण समझाया :

"गांधीजी ! हम समझते हैं कि आप विलायत के लिए बड़े खतरनाक हैं। हमें आपको जनता को बहकाने से रोकना है। इसके लिए हमें क्या करना चाहिए ?"

"भाइयो ! मुझे सजा ही दीजिये। आप सही बात कहते हैं। यदि आप मुझे स्वतंत्र रहने देंगे, तो मैं अपने देश में और अच्छा संगठन करने का प्रयत्न करूँगा। मेरा सत्याग्रह का शस्त्र आपके अस्त्रों से सौ गुना अधिक शक्तिशाली है।"

"लेकिन गांधीजी ! आप चुप क्यों नहीं बैठते ? आपको जेल भेजने में हमें बड़ा दुःख होता है।"

"मित्रो ! मैं आपको कैसे समझाऊँ कि मैं अपना कर्तव्य कर रहा हूँ। हमारी जनता दुःखी है। मेरा पहला कर्तव्य है कि मैं अपनी जनता की सहायता करूँ। मैं सत्याग्रह के अलावा इसका और कोई दूसरा उपाय नहीं देखता।

"मैं सच्चे दिल से ब्रिटेन से हाथ मिलाना चाहता हूँ। लेकिन जब तक वह हमारी दबी हुई जनता से सहानुभूति नहीं प्रकट करता, तब तक मैं ऐसा कैसे कर सकता हूँ? ब्रिटेन बीच-बीच में मित्रता की निशानी दिखाये, इससे बात पूरी नहीं हो सकती। मैं चाहता हूँ कि वह हमारे हृदय को समझे और हमारी रक्षा करने आये।

"जब तक आप यह नहीं कहते—'हाँ, हम समझ गये, हमें क्षमा कीजिये, हमने गलती की, हमने जो कुछ हिन्दुस्तान से छीन लिया, उसे हम वापस देना चाहते हैं', तब तक मैं प्रेमपूर्वक आपसे हाथ नहीं मिला सकता।"

"लेकिन हमें क्या वापस देना है?" न्यायाधीशों ने पूछा।

गांधीजी ने उन्हें बताया कि "हमारे गाँवों में कितना विलायती कपड़ा पहुँचता है, किस प्रकार हमारे गरीब किसान, जिनके पास और कोई दूसरा साधन नहीं, अपनी जमीन से ज्यादा-से-ज्यादा फसल पैदा करने की कोशिश करते हैं। लेकिन चूँकि वे अति गरीब हैं, इसलिए वे सही तरीके से जमीन की सेवा नहीं कर सकते और ठीक से उसे नहीं कमा पाते। इससे हिन्दुस्तान की जमीन कमजोर होती जा रही है। अब इसमें हमारी आबादी के लिए पूरा अनाज नहीं पैदा होता, जिससे हमारे बच्चे भूखों मरने लगे हैं।"

गांधीजी ने कहा कि "मैं तो शरीफ विलायत के सामने यह माँग पेश करता हूँ कि वह अपना कपड़ा यहाँ न भेजे और वह हमें अपने किसानों को कताई-बुनाई का काम सिखाने की आजादी दे दे। जब हमारे किसान अपनी जरूरतभर का कपड़ा खुद बना लेंगे, तो वे अपने मुश्किल से कमाये हुए पैसे को विलायती कपड़ा खरीदने में खर्च नहीं करेंगे। तभी हमारे गाँव बच सकेंगे।

"आप हमें खुद अपनी रोटी कमा लेने के लिए मौका दीजिये। जिस दिन से ब्रिटेन ऐसा करने लग जायगा, मैं फौरन उससे हाथ मिलाऊँगा; क्योंकि मैं उसके सद्-गुणों को पहचानता हूँ और उसकी कुशलता का आदर करता हूँ।"

लेकिन गोरे न्यायाधीश गांधीजी की माँगों को भला कैसे पूरा करते? उनकी सरकार को करोड़ों आदमियों को भूखों मारकर अपने उद्योग-धन्धे चलाना ही पसन्द था।

ये न्यायाधीश शरीफ और ईमानदार व्यक्ति थे। उन्होंने गांधीजी से पूछा:

"अच्छा, फिर आप ही बताइये कि आपको क्या सजा दी जाय?"

गांधीजी ने उत्तर दिया: "सख्त से सख्त सजा।"

"छह साल की कैद क्या ज्यादा होगी?"

"नहीं, यह तो बहुत कम है।" गांधीजी ने उत्तर दिया।

न्यायाधीश उनकी सजा बढ़ाना नहीं चाहते थे। वे बोले : "छह साल की कैद और बन्दीगृह में अकेले रहना कम नहीं है।"

जेल में बीमारी और व्यापक सहानुभूति

अपने कुटुम्ब से बहुत दूर रहकर गांधीजी ने दो साल उस जेल की निर्जन कोठरी में बिता दिये। उनकी तबीयत खराब रहने लगी। दो साल के बाद उन्हें बड़े जोर से अपेण्डिसाइटिस की बीमारी हो गयी। तब अंग्रेजों को यह डर लगा कि यदि गांधीजी जेल में समाप्त हो गये, तो सारा हिन्दुस्तान ब्रिटिश सरकार को दोष देगा और उसके विरुद्ध खड़ा हो जायगा। अतः और देर तक गांधीजी को जेल में रखने की उसे हिम्मत न पड़ी।

एक प्रसिद्ध अंग्रेज डॉक्टर ने गांधीजी के ऑपरेशन की जिम्मेवारी ले ली। यदि उन्होंने थोड़ी भी देर की होती, तो गांधीजी के प्राण खतरे में पड़ जाते।

तब गांधीजी को अपने जीवन का सबसे सुन्दर अनुभव हुआ। विलायती अस्पताल में सुपरिण्टेण्डेण्ट से लेकर छोटे-से-छोटे चपरासी तक सभी लोग बड़े प्रेम से उनकी सेवा करने लगे। हर रोज सैकड़ों लोग उनकी

खबर पूछने आते थे। कई लोग तो अस्पताल में ही रहने लगे। उन्हें छोड़कर जाना ही नहीं चाहते थे। ये लोग गांधीजी को इस तरह प्यार करते थे, जैसे वे उन्हींके घर के एक बच्चे हों।

फौज का एक बूढ़ा अंग्रेज अफसर रोज उनके लिए फूल लाकर उनकी हालत पूछता था और उनके स्वस्थ होने के लिए आशीर्वाद देता था।

"अच्छा गांधीजी! आपकी तबीयत कैसी है? कुछ अच्छे हैं?" बिस्तर के पास दो-चार मिनट बैठकर वह खूब जोश से उनसे हाथ मिलाता था। दूसरे दिन फिर उसी समय वह फूल लेकर आता था।

उसकी सहानुभूति से गांधीजी गद्गद हो गये। एक दिन वह ज्यादा देर तक वहाँ पर बैठा रहा। फिर गद्गद कण्ठ से बोला: "गांधीजी, आप बताइये, मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ? आप मुझे अपने भाई के समान प्रिय हैं। मैं हर रोज ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि आप दीर्घायु हों। मुझसे भी ज्यादा दिनों तक जीवित रहें। मालूम है, अब मैं जवान नहीं रहा, मैं ९० साल का हो गया हूँ।"

ऐसी सहानुभूति और प्रेम का असर दवाओं से कहीं ज्यादा होता है। इन सब भाइयों के प्रेम ने गांधीजी को स्वस्थ करने में बड़ी मदद की।

अस्पताल से छूटकर गांधीजी फिर पहले की तरह अपने दैनिक जीवन के कार्यक्रम में जुट गये। ठीक उस नदी की तरह, जिसका बहाव थोड़े दिनों के लिए रुककर फिर चालू हो गया हो।

सत्याग्रह और प्रेम के उनके अंकुर के चारों ओर रोज ही नयी शक्ति का संचार होता रहता था। उस चिराग का प्रकाश दूर-दूर फैलता गया।

वर्ष बीतते गये, कभी संघर्ष से, कभी शान्ति से। किसी साल किसी बात में विजय होती थी, किसी साल बड़ी परीक्षा का सामना करना पड़ता था; लेकिन गांधीजी कभी निराश न हुए। अक्सर उनके हृदय में महात्मा बुद्ध का यह आखिरी सन्देश बुलन्द रहता: "संघर्ष जारी रखिये, सतत संघर्ष जारी रखिये।"

उन्होंने निश्चय किया कि जैसे-जैसे मौके आते रहेंगे, वैसे-वैसे हम संघर्ष चलाते रहेंगे और लड़ाई-पर-लड़ाई करेंगे। सिर्फ मौत ही हमारा जोश रोक सकती है। ● ● ●

समझौते का प्रयत्न : ३ :

गोलमेज परिषद्

गांधीजी विलायत के लिए रवाना हुए। उनके हाथ में लाठी थी और वे सफेद लँगोटी पहने हुए थे। वन्दरगाह के लोग और विलायती जहाज पर सवार लोग गांधीजी को वड़े आश्चर्य की दृष्टि से देखते थे। वह बूढ़ा तीसरे दर्जे के डेक में जमीन पर बैठकर चरखा कातता था और समुद्र की अतल गहराई को निहारता रहता था।

कृत्रिम जीवन वितानेवाले पश्चिमी लोग, उनके साथ सैकड़ों पत्रकार, चिन्तित और उत्तेजित मित्र तथा ताना मारनेवाले शत्रु गांधीजी पर प्रश्नों की झड़ी लगा देते थे।

पैंतीस करोड़ लोगों के प्रतिनिधि गांधीजी सबको शान्ति और निष्कपट भाव से उत्तर देते थे।

वे अपने भाषणों में इस प्रकार समझाते थे : "इस परिषद् पर, जो भारत के नुमाइंदों और विलायत के मन्त्रियों के बीच हो रही है, मैं वहुत आशाएँ नहीं रखता। मैं शान्ति और प्रेम के सब साधनों का प्रयोग

करना चाहता हूँ। मैं हर प्रकार से कोशिश करूँगा कि हमारे देश और शक्तिशाली ब्रिटेन के बीच शान्तिमय समझौता हो जाय। चारों ओर हम ऐसे व्यक्तियों को पाते हैं, जो शान्ति की खोज में हैं। चारों ओर हमें ऐसे व्यक्ति मिलते हैं, जो न्याय पाने के लिए तड़पते हैं। मैं उनसे बातचीत करना चाहता हूँ। उनका आवाहन करता हूँ। सत्य में मेरा विश्वास है। अन्त में उसीकी विजय होती है। इसी आशा से मैं विलायत आया हूँ।"

दुबारा धोखा और सत्याग्रह

गोलमेज परिषद् के फलस्वरूप ब्रिटेन ने हिन्दुस्तान को थोड़ी-सी आजादी दे दी। नया विधान बन गया।

गांधीजी परिषद् से अपने देश लौट आये। दिसम्बर १९३१ में अदन बन्दरगाह से जब वे हिन्द महासागर में प्रवेश कर रहे थे, तभी उन्हें पहली चिन्ताजनक खबर मिली। लाट साहब ने कई स्वयंसेवकों को गिरफ्तार कर लिया था। लेकिन चूँकि वे पक्के आशावादी थे, इसलिए इस खबर को सुनकर वे निराश न हुए।

"नहीं! नहीं!! हिंसा कभी नहीं। हम प्रेम से ही विजय पायेंगे।" उन्होंने सोचा।

बम्बई पहुँचकर उन्हें और भी बुरे समाचार मिले। नेता लोग गिरफ्तार किये जा चुके थे। गोली से ग्यारह

व्यक्ति मरे थे, पचास घायल हुए थे, हजारों लोग जेलों में थे। कई प्रदेशों में धर-पकड़ चल रही थी। चारों ओर भय का साम्राज्य फैला हुआ था।

यह सब देखकर गांधीजी के साथी भड़क उठे थे। वे कहने लगे थे : "बापू! आन्दोलन का समय आ गया है। अब धीरज और प्रेम से काम नहीं चलेगा। पशु-शक्ति का सामना पशु-शक्ति से ही करना पड़ेगा।"

"नहीं-नहीं, भाइयो! हम शान्ति और प्रेम का अपना आन्दोलन जारी रखेंगे। हम अपने हाथों पर खून के धब्बे नहीं लगने देंगे। धीरत रखिये, मैं लाट साहब से मिलने जाऊँगा। मैं देश की परिस्थिति उन्हें समझाऊँगा। वे सच्चे और न्याय-प्रेमी व्यक्ति हैं। सारी बात उनकी समझ में आ जायगी।"

गांधीजी ने लाट साहब को लम्बा तार देकर उनसे प्रार्थना की कि वे मुलाकात के लिए समय दें, पर उन्होंने मिलने से इनकार कर दिया। वे इस सम्बन्ध में कोई चर्चा ही न करना चाहते थे।

उनके उत्तर से तिरस्कार और अभिमान की बू आती थी। गांधीजी ने अपने आत्मसम्मान को सँभाला। एक ही विचार उन्हें सता रहा था कि अपनी घायल मातृ-भूमि की रक्षा की जाय। वे अभी भी निराश न हुए।

वे सोचने लगे : "मनुष्य के हृदय में दया, सत्य और

न्याय की आकांक्षा छिपी हुई है। हम श्रद्धा से मनुष्य के हृदय पर प्रहार करेंगे।"

तब १ जनवरी १९३२ को उन्होंने लाट साहब के नाम एक और तार भेजा। उसमें उन्होंने लिखा कि "यह बड़ी शोचनीय बात है कि आपने शांति से की हुई मेरी प्रार्थना को अनुचित रीति से ठुकरा दिया। मेरे सुझाव पर विचार करने के बदले आपने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया। आपने मुझे अपने प्रिय साथियों को धोखा देने की सलाह दी है। आपने यह भी फरमाया कि यदि मैं ऐसा धोखे का काम कर लूँ, तो भी आप मुझसे हमारे देश के मुख्य प्रश्नों पर चर्चा नहीं करेंगे। वैधानिक सुधार की कोई कीमत नहीं, यदि वह सारे देश के नैतिक पतन के रूप में होता है। मैं आशा करता हूँ कि कोई भी व्यक्ति खुले दिल से हमारे देश का पतन स्वीकार नहीं करेगा।"

उस तार में गांधीजी ने अपने भाइयों के कष्ट का खुलासा देकर लाट साहब का आवाहन किया कि वे जनता की आवाज सुनकर न्यायपूर्ण फैसला करने की कृपा करें। अन्त में उन्होंने फिर अपना विश्वास दुहराया कि "अहिंसा में मेरी श्रद्धा है। मेरा विश्वास है कि शांतिमय असहयोग खूनी संघर्ष से बचने का एकमात्र साधन है। मैं कभी भी इस विश्वास को भंग नहीं कर सकूँगा।"

यह सब कष्ट व्यर्थ सिद्ध हुआ। लाट साहब गांधीजी

से मिलना न चाहते थे। उनका इनकार युद्ध छेड़ने का ही संदेशा था।

गांधीजी जानते थे कि वे किसी भी समय गिरफ्तार हो सकते हैं। इसलिए उन्होंने अपने मित्रों को इसके लिए तैयार कर लिया।

थोड़े दिनों बाद पुलिस उन्हें गिरफ्तार करने आयी और उसने उन्हें यरवदा-जेल में राज्य के कैदी के तौर पर बन्द कर दिया।

गांधीजी यह आशा कर रहे थे कि उनके कैद हो जाने पर जनता को और कष्ट न झेलने पड़ेंगे। लेकिन यह बात गलत निकली। दूसरे दिन चार नये ऑर्डिनेन्स जारी कर दिये गये, जिससे सारा देश भयभीत हो गया। देशभर में धर-पकड़ होने लगी। गांधीजी के सभी मुख्य साथी गिरफ्तार कर लिये गये। अस्सी हजार से ज्यादा लोग जेलों में भर दिये गये। ऐसा लगने लगा कि सारे देश की जिन्दगी को जैसे लकवा मार गया हो।

यह सब दमन देखकर गांधीजी का दिल बैठने लगा। वे कुछ करने के लिए हाथ उठाते थे, पर वे कर ही क्या सकते थे? फिर भी वे निराश न हुए।

"पशु-शक्ति क्षणिक है", वे सोचते थे : "किसी न किसी दिन वह हार ही जायगी। न्याय तो अमर है, किसी न किसी दिन उसकी विजय अवश्य होगी।"

उस संघर्ष के मरणान्तक समय में एक स्वाभिमानी आवाज बुलन्द हुई। रवीन्द्रनाथ ठाकुर उनके साथ आये। उन्होंने अपनी घोषणा प्रकाशित की :

"हिन्दुस्तान के गोरे शासक समझते हैं कि वे हिन्दुस्तान की अवहेलना कर सकते हैं, लेकिन जमाना आ गया है, हम दुनिया को दिखायेंगे कि हमारी हिम्मत सरकार की हिम्मत से अधिक शक्तिशाली है।"

इस घोषणा से देश में एक नयी शक्ति पैदा हुई।

विलायती कपड़े और शराब का बहिष्कार हुआ। लोगों ने देश के हित के लिए अपने व्यक्तिगत स्वार्थों का त्याग किया। कुछ लोग तो अवश्य ही कमजोर पड़े, पर अपनी कमजोरी पर उन्हें बड़ी शर्म आयी।

हमारी सबसे महत्त्वपूर्ण विजय वह थी, जो हमने अपने ऊपर प्राप्त की।

जातीय भेद का समझौता अस्वीकृत

बहुधा अंग्रेज लोग खुद फूट पैदा किया करते थे, ताकि कुछ मुट्ठीभर लोग ४० करोड़ जनता पर अपनी हुकूमत बनाये रखें।

सन् १९३२ में बिलकुल यही बात हुई। ब्रिटिश राजनीतिज्ञों ने सोचा कि हरिजनों को सवर्णों से अलग कर

देंगे। उन्होंने हरिजनों को विधानसभा में अलग स्थान देने का वचन दिया। अंग्रेजों ने हरिजनों के दिमाग में यह बात घुसाने की कोशिश की कि हिन्दू और मुसलमान उन्हें दबाने की कोशिश में हैं।

हम सब लोग जानते हैं कि गांधीजी के जीवन का एक मुख्य लक्ष्य सबको यह समझा देने का रहा है कि ईश्वर की इस सृष्टि में जाति जैसी कोई चीज ही नहीं है। हम सब भाई-बहन हैं। हम सब पृथ्वी माता की सन्तान हैं।

इस बात को दिखाने के लिए एक जलसा किया गया। डेढ़ सौ अवर्ण और कई सवर्णों ने मिलकर ब्राह्मणों से जनेऊ धारण किये।

लेकिन जलसे के उत्तर में गोलियाँ चलीं!

अंग्रेजों के बीच में भी कुछ ऐसे व्यक्ति हैं, जो सत्य के लिए बलिदान होने को तैयार रहते हैं।

उन अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान की पुकार सुनी। उन्होंने हिन्दुस्तान का पक्ष लिया। विलायत में भी हिन्दुस्तान के अधिकारों के पक्ष में सभाएँ होने लगीं। 'हिन्दुस्तानी मित्र-संघ' नाम की संस्थाएँ पेरिस, लन्दन और बर्लिन में बनीं।

लन्दन की पार्लमेंट में भी हिन्दुस्तान के पक्ष में आवाज उठने लगी। एक सदस्य ने कहा :

"गोलमेज परिषद् के समय सब हिन्दुस्तानियों ने पूर्ण स्वराज्य की माँग पेश की। हिन्दुस्तान अपने राज्य को सँभालने के काबिल है या नहीं, यह फैसला हमें नहीं करना है। हिन्दुस्तान के लोग अपने बीच में समझौते का तरीका ढूँढ़ लें। यही हमें देखना है।"

ब्रिस्टल की एक सभा में एक अंग्रेज बहन ने कहा : "हिन्दुस्तान की समस्या का एकमात्र हल यह हो सकता है कि अंग्रेज लोग हिन्दुस्तान छोड़कर चले जायँ।"

अब हम समझ गये कि ब्रिटेन की नीति क्या थी ? वह चाहता था कि सवर्णों व अवर्णों का संगठन न हो।

गांधीजी ने विलायती शासकों को इसके लिए लिखा और अपनी सारी शक्ति से इसका विरोध किया। उन्होंने उन्हें समझाया कि वे हिन्दू-धर्म और देश की एकता के विरुद्ध कितना गलत काम करने जा रहे हैं।

लेकिन सब व्यर्थ रहा। तब फिर क्या हो ?

गांधीजी के हाथ में और दूसरा अस्त्र तो था नहीं। उनका एक ही अस्त्र था, उनका अपना जीवन ! अपने देश की रक्षा के लिए उन्होंने उन प्राणों का बलिदान करना चाहा।

• • •

हरिजनों के लिए तपस्या : ४ :

उपवास से विजय

गांधीजी का उपवास २० सितम्बर सन् १९३२ की दोपहर से शुरू हुआ। लेकिन इसके पहले से ही उनका शरीर काफी कमजोर था। उनका शरीर कड़े उपवास का सामना करने लायक नहीं था। इसलिए उन्होंने शरीर की हालत देखकर यह व्रत नहीं लिया था।

उनके साथी, उनके विशेष मित्र, कस्तूरबा और रवीन्द्रनाथ आदि उनके साथ ही थे।

"मेरे साथ प्रार्थना कीजिये, मेरे लिए प्रार्थना कीजिये", गांधीजी उनसे कहते थे।

वास्तव में गांधीजी का हृदय और भारतवर्ष का हृदय एक ही गति से फड़क रहा था।

२५ सितम्बर की दोपहर को मैकडानल्ड का तार आया।

"बापू, अब उपवास तोड़ दीजिये" स्त्रियों ने कहा। वे कभी-कभी बहुत अधीर हो जाती हैं न?

"बहनो, पहले मुझे उस उत्तर को देखना चाहिए कि क्या वह ठीक है?"

गांधीजी जानते थे कि सतर्क रहने की आवश्यकता है और अच्छी तरह से विरोधी की ईमानदारी की जाँच करने की जरूरत है।

अन्त में गांधीजी ने कहा : "यह उत्तर सच और सम्पूर्ण है। मैं उपवास तोड़ सकता हूँ।" गांधीजी के ऐसा कहने पर सब साथियों ने मिलकर यह भजन गाया :

"लीड काइण्डली लाइट........" (हे प्रकाशमय प्रभु, तू कृपा करके हमें रास्ता दिखा !)

समाज की नव-रचना पर विचार

गांधीजी और भी ग्यारह महीने तक जेल में रहे। यह समय लम्बा नहीं मालूम दिया। एक तो यह आराम करने का पहला मौका था और फिर अध्ययन करने का भी यह मौका था।

उन्होंने अपने प्रिय लेखकों की कितावें दुबारा पढ़ीं—टॉल्स्टॉय, थॉरो, रस्किन। उन्होंने बहुधा लोगों को रूस की क्रान्ति की बातें करते सुना। दूसरे देशों में भी लोग अपनी आजादी के लिए लड़ रहे थे।

गांधीजी को मालूम था कि रूस के मजदूरों की तरह ही सारी दुनिया के किसान-मजदूर लेनिन की बहुत

इज्जत करते हैं। वे लोग कार्ल मार्क्स, एंगेल, लेनिन और स्टालिन के लेखों को वेद-पुराणों का-सा महत्त्व देते हैं।

गांधीजी ने अपने मित्रों से ये पुस्तकें मँगवाकर इनका अध्ययन करना शुरू किया। उन्होंने जाना कि सर्वोदय तथा मार्क्सवाद का अन्तिम लक्ष्य एक ही है। लेकिन उस लक्ष्य तक पहुँचने के साधनों में एक बुनियादी अन्तर है। समाज के ढाँचे को हिंसा द्वारा बदलने की ओर गांधीजी का रत्तीभर भी आकर्षण न था। उन्हें मालूम था कि इससे गरीब और मूक भारतवासियों को कुछ भी फायदा न होगा। उन्हें ऐसा लगा कि वे खुद उन लोगों से भी ज्यादा साम्यवादी हैं; क्योंकि वे समझते थे कि साम्यवाद के बारे में उनके अपने जो खयाल हैं, उनसे ही दुःखी मानव की रक्षा हो सकती है।

हमारे आश्रमों में मुख्य सूत्र यह रहा है: "हरएक को उसकी आवश्यकता के अनुसार और हरएक से उसकी शक्ति के अनुसार।"

गांधीजी की माँ बिलकुल सीधी और अपढ़ तो थीं, पर उन्होंने गांधीजी को कुछ अमर सिद्धान्त सिखाये थे। वे कहा करती थीं: "हरएक अधिकार में कर्तव्य छिपा हुआ है। जीवित रहने के अधिकार में भी कर्तव्य छिपा है।"

साबरमती के आश्रम में माताएँ अपनी रसोई को आम मानती थीं। वे दूसरे परिवार के बच्चों को अपने परिवार में शामिल कर उनकी सेवा किया करती थीं। वे अपने बच्चों को भी औरों के सिपुर्द कर दिया करती थीं।

यह प्रयत्न बन्धनों को तोड़ने और स्त्रियों को आजाद करने का था। पर गांधीजी पारिवारिक जीवन को खतम नहीं करना चाहते थे। यह एक सच्ची क्रान्ति थी, जिसमें अराजकता न थी।

एक बार जब गांधीजी एक विलायती मित्र को तालीमी संघ की रसोई दिखा रहे थे, जिसमें लगभग १०० व्यक्ति प्रतिदिन भोजन किया करते थे, तो उस मित्र ने कहा: "आप जिसे रसोई कहते हैं, उसे हम 'क्वीज़ीन' कहते हैं और साम्यवादी लोग उसे 'कम्यून' कहेंगे। दुनियाभर के लोग इससे काफी प्रभावित होंगे।"

कुछ विलायती मित्र समझते थे कि गांधीजी कोरे सिद्धान्तवादी हैं और वे अपने को दैनिक जीवन की वास्तविकताओं में टिका पाने में असमर्थ हैं। गांधीजी उन्हें समझाया करते थे कि वे सबसे पहले हिन्दुस्तान के पुत्र हैं और भारत की हवा में साँस लेते हैं। वे अपने शरीर को भारत की मिट्टी से तथा अपनी आत्मा को हिन्दू-धर्म से पोसते हैं और वे जो कुछ काम किया करते हैं, वह भारतवर्ष के साधनों और औजारों से करते हैं।

रामकृष्ण परमहंस महाराज ने कहा था : "आप समाज-सुधार की बातें किया करते हैं, लेकिन उन्हें प्रारम्भ करने के पहले ईश्वर को पाना चाहिए। याद रखिये कि पुराने जमाने में ऋषि-मुनि ईश्वर को पाने के लिए सांसारिक माया को त्याग देते थे। बस, इतना ही करने की आवश्यकता है। बाकी सब चीजें अपने-आप मिल जायँगी।

"पहले ईश्वर के दर्शन करो, उसके बाद तुम समाज-सुधार के भाषण दे सकोगे।"

उनके माननीय शिष्य विवेकानन्द ने भी कहा था : "हिन्दुस्तान में राजनैतिक और सामाजिक सुधार धार्मिक चेतना से प्रेरित होने चाहिए।"

भारतवर्ष के सच्चे सुपुत्र की भाँति गांधीजी ने भी अपने गुरुओं का मार्ग अपनाया। उनका सीधा-सादा रास्ता यूरोप के राजनीतिज्ञों की चालाकियों से कहीं अधिक सफल है।

गांधीजी ने जब पहली बार खद्दर का आन्दोलन शुरू किया था, तब हिन्दुस्तान के बाजारों में चालीस प्रतिशत कपड़ा लंकाशायर की मिलों से आता था। इस बीमारी के इलाज के लिए गांधीजी ने चरखा सुझाया और इसके द्वारा उन्होंने लाखों किसानों को,

जो दूर-दूर गाँवों में नंगे और बेकार थे, भूखों मरने से बचाया।

एक समय आया, जब रवीन्द्रनाथ टाकुर और पादरी एलविन जैसे गांधीजी के अत्यन्त नजदीकी मित्रों ने विलायती कपड़े के बहिष्कार की आलोचना की थी।

तब गांधीजी ने उन्हें ईस्ट इण्डिया कम्पनी की याद दिलायी और कहा कि "यह कपड़ा पतन और फूट की निशानी है। हम इसे गरीबों को देने का बहाना भी नहीं बना सकते; क्योंकि गरीबों का स्वाभिमान किसी कदर भी अमीरों के स्वाभिमान से कम नहीं है। इसलिए इन कपड़ों को जलाना ही चाहिए।"

"हमारे घर में आग लगी है" : उन्होंने कवि रवीन्द्रनाथ को लिखा : "आप अपने सितार को छोड़कर आइये, आग बुझाने में हमारी मदद कीजिये।"

गांधीजी ने विश्वकवि से चरखा हाथ में लेने की और विलायती कपड़े को छोड़ने की प्रार्थना की। कहा : "अब हमारे देश में कोई भी आदमी मिल-मालिकों का साथ न दे।"

कवि तो अपनी सुखी दुनिया के सपनों में अपने को भूल सकते हैं। लेकिन गांधीजी एक क्षण को भी न भूले कि चिड़ियाँ खाना खाकर ही गाना गा सकती हैं। गांधीजी सदा ही दलितों की रक्षा में रहते थे।

कितनी ही बार उन्हें मिल-मालिकों और विलायती अधिकारियों के साथ मिलकर हड़ताल की पंचायतों में पंच बनना पड़ा। एक बार अहमदाबाद के मजदूरों ने ३५% वेतन-वृद्धि की माँग के लिए न्यायपूर्ण हड़ताल की। २१ दिन तक वे हड़ताल पर डटे रहे। लेकिन अन्त में एक ओर अपने भूखे बच्चों की परेशानी और दूसरी ओर मिल-मालिकों का कड़ा रुख देखकर वे निराश होने लगे। जब गांधीजी ने देखा कि यह सही आन्दोलन कमजोर पड़ रहा है और थोड़े दिनों में ही केवल दो हजार हड़ताली मजदूर रह जायेंगे, तो मजदूरों की सहानुभूति में गांधीजी ने खुद ही आमरण अनशन शुरू कर दिया। थोड़े दिनों बाद उनकी विजय हुई।

उसके बाद गांधीजी ने एक संस्था की स्थापना की, जिसमें पाँच स्वतन्त्र मजदूर-संघों का संगठन हुआ। ये धुनिये, कताई करनेवाले, बुनकर, मिस्त्री और निरीक्षकों के संघ थे। अब इस संघ के पास अपना निजी अस्पताल है, औषधालय भी हैं, वकील भी हैं और सहकारी दूकानें भी हैं।

सम्भव है कि दूसरे देशों में ऐसे मौके पर लोग बन्दूक या बम हाथों में ले लेते, लेकिन एक बार फिर अहिंसा की शक्ति प्रकट हुई।

उपवास के नियम और महत्त्व

सन् १९३२ में ब्रिटिश सरकार ने गांधीजी को जेल के अन्दर रहते हुए हरिजनों का काम करने के लिए हर प्रकार की सहूलियत दे दी थी। मेकडानल्ड समझौते के दो दिन बाद सरकार ने इन सहूलियतों को रद कर दिया। गांधीजी ने फौरन एतराज किया : "यदि मुझे हरिजनों की सेवा करने का अधिकार नहीं है, तो मेरा जीवन व्यर्थ है।"

३ नवम्बर को उन्हें सरकार का उत्तर मिला। उन्हें हरिजनों का काम करने की इजाजत मिल गयी; लेकिन सत्याग्रह के प्रचार की कतई आज्ञा नहीं थी।

अब गांधीजी ने फिर आमरण अनशन की तैयारी की। इस अहिंसक अस्त्र के बारे में कुछ समझने की आवश्यकता है। हर व्यक्ति इस प्रकार का अनशन नहीं कर सकता। जब तक परमात्मा पर अटल श्रद्धा न हो, तब तक इस प्रकार का अनशन नहीं करना चाहिए। यह कभी भी एक यान्त्रिक क्रिया न बने। उपवास के नियम बड़े कड़े होते हैं।

अधिकतर उपवास केवल भूख-हड़ताल होते हैं। लोग पहले से न तो किसी प्रकार की तैयारी करते हैं और न आत्म-शुद्धि ही करते हैं। यदि यह भूख-हड़ताल छोटी-

छोटी बातों के लिए की जायगी, तो उनमें जो थोड़ी-बहुत सफलता की संभावना है, वह भी लुप्त हो जायगी। अन्त में लोग उनकी हँसी उड़ायेंगे।

गांधीजी के राजनैतिक साथी कभी भी उपवास की ओर आकर्षित न हुए, पर गांधीजी के उपवास करने में उन्होंने कभी भी कोई दोष नहीं देखा।

ग्यारह वर्ष के भीतर गांधीजी ने कुल मिलाकर १०४ उपवास किये थे। सब के सब बहुत सोच-समझकर किये। एक भी उपवास हल्के दिल से नहीं किया।

सन् १९३३ में हालाँकि गांधीजी का उपवास बहुत थोड़े दिन के लिए था, फिर भी उसमें उन्हें बहुत तकलीफ हुई थी। जिस रोज उन्होंने उसे समाप्त किया था, सचमुच उस दिन वे अन्तिम साँस लेने की हालत में थे।

सरकार ने गांधीजी को ससून अस्पताल में भेजा। २३ अगस्त को सब लोगों ने समझा कि अब उनकी मौत निकट है। तब सरकार ने घबराकर उनके लिए बिना शर्त की रिहाई का हुक्म दिया।

भारत की परिस्थिति

इस रिहाई से उन्हें खुशी नहीं, बल्कि दुःख हुआ। उन्हें इस बात पर बड़ी शर्म लगी कि अपने साथियों को

की कलम चलाने से नाश के अलावा और कुछ नहीं होता। गांधीजी पूरे तौर से अपनी जिम्मेदारी समझते थे।

गांधीजी कभी किसी भी कार्य को छिपकर न करते थे। उन्हें गुप्त कार्यों से घृणा थी। हरएक सिपाही को यह अधिकार होना चाहिए कि चौबीस घण्टे अपने नेताओं के विचार और काम पर नियन्त्रण रख सके।

इसलिए जब कभी भी गांधीजी अपने विचार में कोई दोष पाते या अपने काम में कोई गलती पाते, तो वे फौरन जनता के सामने साफ शब्दों में उसका खुलासा करते। क्या कोई सेनापति गलती या पराजय के कारण लड़ाई को छोड़ देगा? ● ● ●

रचनात्मक कार्यक्रम का विस्तार : ५ :

राष्ट्रीय कांग्रेस से त्याग-पत्र

वर्ष तेजी से बीतते गये। जेल, प्रचार-यात्रा, पत्रिकाओं में प्रचार, वर्धा में शान्ति का जीवन, ये सब काम गांधीजी को बहुत प्रिय थे। यह बात निश्चित है कि जिस प्रकार मधुमक्खी के जीवन में क्षण-क्षण मधु-संचय का रहस्य छिपा रहता है, उसी प्रकार गांधीजी के जीवन में प्रतिक्षण अनुभव-प्राप्ति का आनन्द रहता था। परमात्मा की यह असीम कृपा थी।

मितव्ययिता

सन् १९३४ में गांधीजी कांग्रेस के अध्यक्ष पद से इस्तीफा देकर वर्धा में रहने लगे।

वे कोरे उपदेश न देकर, व्यावहारिक काम के उदाहरण द्वारा प्रचार करना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने एक हरिजन की औसत दैनिक आमदनी का हिसाब लगाकर निश्चय किया कि वे भी इतने में ही अपना निजी खर्च चलायेंगे।

कभी-कभी मित्र लोग उनके लिए कोई अच्छी चीज ले आते, जैसे फल, शहद, घरेलू मिठाई वगैरह। उन्हें दुःख

न देने के लिए गांधीजी उन चीजों को स्वीकार तो कर लेते थे, लेकिन उनके चले जाने के बाद वे उन चीजों की कीमत लगाते थे और दूसरे दिन की खुराक में से उसकी कीमत घटा लेते थे। इस तरह कभी-कभी उन्हें एक-दो दिन तक उपवास करने की नौबत आ जाती थी। लेकिन इससे उन्हें आत्मसन्तोष होता था।

व्यर्थ चीजों से छुटकारा

गांधीजी ने एक छोटी-सी हरिजन लड़की को गोद लिया था। वे उसे अपने ही बच्चों की तरह प्यार करते थे। एक बार खेल में उससे एक शीशा टूट गया। उसे बड़ा दुःख हुआ। वह जोर से रोती हुई गांधीजी के पास गयी। गांधीजी ने देखा कि वे अभी भी कितनी ही फालतू चीजें रखते हैं। उसने रोते-रोते पूछा : "बापूजी, क्या आप मुझे क्षमा करेंगे ?"

"बेटी, क्या यह रोने लायक बात है ? यह लो, मैं इस शीशे को और इस साबुन को भी नदी में फेंक रहा हूँ। हमारे गरीब किसान हजामत बनाने के लिए भला कहीं शीशा और खास साबुन रखते हैं ?"

वह हँसती-हँसती बड़े प्रेम से गांधीजी के चारों ओर खेलने लगी। वह खूब खुश थी। गांधीजी जब कभी ऐसी व्यर्थ की किसी चीज से मुक्ति पाते थे, तो बहुत खुश होते थे।

विश्वव्यापी मैत्री

गांधीजी के मित्र केवल भारत में ही सीमित नहीं थे। दुनिया के सभी भागों से उनकी डाक आती थी। कुछ चिट्ठियाँ बड़ी प्रेमभरी, आनन्ददायक और नम्रतापूर्ण होती थीं, तो कुछ बड़ी निराशा से भरी हुई। कभी ऐसी चिट्ठियाँ आती थीं कि उनमें उनके विचारों पर पुनर्विचार किये जाने की प्रार्थना होती थी।

एक दिन गांधीजी को एक चिट्ठी मिली, जिसे देखकर उन्हें बड़ी खुशी हुई। यह चिट्ठी चार्ली चेपलिन की थी। लिखा था कि "मैं सिर्फ एक सुखान्त नाटककार हूँ। मुझे अभिनय में दिलचस्पी रहती है। आप इस युग के सबसे बड़े अभिनय हैं। आप महात्मा हैं। मैं आपसे मिलने को बहुत इच्छुक हूँ।"

गांधीजी ने उत्तर दिया: "आप बच्चों को हँसाते हैं। स्वर्ग में पहुँचने का यह सबसे उत्तम रास्ता है। मैं नहीं समझता कि मैं इतना पहुँच सकूँगा, क्योंकि मैं कोई ऐसा सन्त नहीं हूँ। हम एक-दूसरे से परिचय करें।"

प्रदर्शित सम्मान से सचेत

यात्रा के समय, बड़े शहरों में, लोग गांधीजी का बड़ा स्वागत करते थे। इससे उनका आत्म-विश्वास कम

होता था। यदि लोग उन्हें गाली देते या थूकते, तो उन्हें विश्वास होता था कि वे सही रास्ते पर हैं।

गांधीजी का फोटो छापने का रिवाज भी बढ़ रहा था। इससे उन्हें बहुत दुःख होता था।

पतित बहनों के साथ

कभी-कभी पतित बहनें गांधीजी से मिलने आती थीं। वे कहतीं :

"बापू, हमें भी समाज में प्रवेश करने में मदद कीजिये। हम भी आपके सत्य और अहिंसा के आन्दोलन में शामिल होना चाहती हैं।"

गांधीजी कहा करते थे : "सबसे पहले आपको अज्ञान और रूढ़िवादिता छोड़नी होगी। चरखा हाथ में लेकर अपने हाथों को पवित्र श्रम सिखाइये, किसानों का उदाहरण अपनाइये, अपनी आजीविका शरीर-श्रम से प्राप्त कर दुनिया में सम्मान के पात्र बनिये। यदि आप लोग शरीर-श्रम करने लगेंगी, तो फिर आपको समाज में स्थान मिलेगा। आप कांग्रेस में भी दाखिल हो सकेंगी।"

इनमें कुछ बड़ी उदार और होशियार बहनें भी थीं। उन्होंने विनय की : "आप हमें सोचने के लिए समय दीजिये। हम आपको धोखा नहीं देना चाहतीं।"

यह सही बात है कि उनमें से कई स्त्रियों ने स्वराज्य के आन्दोलन में अपने को बलिदान कर दिया।

साम्प्रदायिक समस्या

हिन्दुस्तानियों के बीच मूर्खता के कारण फूट होने लगी। इससे हमने पश्चिम के उन लोगों को, जो हमारे देश के इतिहास से अनभिज्ञ हैं, यह समझने का मौका दिया कि हिन्दुओं और मुसलमानों में अक्सर फूट रही।

सन् १९१९ में, मुसलमानों को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि ब्रिटेन अपने वचनों को भूलकर फिलिस्तीन और सीरिया को अपने संरक्षण में रख रहा है। असन्तुष्ट होकर उन्होंने दिल्ली में एक बड़ी सभा की। बाद में कालीकट-परिषद् हुई। गांधीजी इस आन्दोलन के सम्बन्ध में कैसे उदासीन रह सकते थे? उनका आन्दोलन सही था। अतः उन्होंने बड़ी खुशी से उनका अध्यक्ष बनना स्वीकार कर लिया। इस पर बहुत से अंग्रेजों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि गांधीजी मुसलमानों को सहयोग देने को तैयार हो गये।

तब गांधीजी ने 'हरिजन' में लिखा था : "हिन्दू, पारसी, ईसाई, मुसलमान, यहूदी, हम सब एक राष्ट्र की तरह रहना चाहते हैं। एक के हित में सबका हित है, मुख्य सवाल न्याय का है।"

सिख अपने अमृतसर के गुरुद्वारे को छोड़कर पूरे जोश से इस आन्दोलन में कूद पड़े थे। बगल में तलवार रहने पर भी जब अंग्रेज सिपाही उन पर टूट पड़ते थे, तो ये कभी भी उन पर हाथ नहीं उठाते थे। शान्ति से खड़े रहकर ये अपनी प्रार्थना जारी रखते थे। उनके अत्यन्त विरोधी दर्शक भी उनकी प्रशंसा करते थे।

सीमांत गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ २० साल तक लगातार अपने लाखों लाल कुर्तीवाले पठानों से गांधीजी को मदद देते रहे।

सर्वधर्मसमानत्व

हिन्दुओं के लिए तो एक ही धर्म है और एक ही परमेश्वर।

"कोई उसे पिता के नाम से पुकारता है, तो कोई माँ के नाम से, कोई मित्र और प्रिय साथी के नाम से, तो कोई उसे हृदय का खजाना कहता है। कोई उसे बच्चे के नाम से पुकारता है। ईश्वर एक ही है। सिर्फ लोगों का अपना देखने का दृष्टिकोण भिन्न है।"

गांधीजी हजारों बार रामकृष्ण परमहंस के इन शब्दों को दुहराते थे। सब धर्म सच्चे हैं, पर हरएक में कुछ भूल भी तो है ही। वे हिन्दू-धर्म को जितना आदर देते थे, उतना ही आदर दूसरे धर्मों को भी देते थे।

द्वितीय विश्व-महायुद्ध

विश्वव्यापी युद्ध छिड़ा। लोभ के पीछे यूरोप ने अपनी आत्मा का सर्वनाश किया; किन्तु हिंसा या युद्ध का जीवन बिताना कोई जिन्दगी तो कदापि नहीं है।

सन् १९३८ में म्यूनिख-परिषद् के बीच गांधीजी ने चेक जनता को एक चिट्ठी लिखी थी। उन्हें बड़ा दुःख था कि ऐसे वीर राष्ट्र में किसी प्रकार की सत्याग्रह की शक्ति नहीं थी। सत्याग्रह के अतिरिक्त उन्हें और कौन रास्ता मिल सकता था ?

एक-एक करके धीरे-धीरे राष्ट्र-पर-राष्ट्र गुलामी में फँसते रहे; क्योंकि उन सबका विश्वास गुलामी पर था। वे भूल गये कि शत्रुओं की सशस्त्र शक्ति के विरुद्ध यदि एक ही व्यक्ति अहिंसा के सही नियम का पालन करता हो, तो वही अकेला राम-राज्य की सारी शक्ति का सामना कर सकता है। इसी प्रकार वह अपने देश की रक्षा करके उसे पुनर्जन्म दे सकता है।

गांधीजी को मालूम था कि हिन्दुस्तान की आत्मा अमर है। वह सब भौतिक कमजोरियों को जीतकर सारी दुनिया की भौतिक शक्ति का सामना कर सकती है। उन्हें यह भी मालूम था कि वह दिन आयेगा ही, जब ब्रिटेन हिन्दुस्तान की सहायता के लिए आग्रह करेगा। उन्हें मालूम था कि विलायत एक खाई के किनारे पर खड़ा

है—वह उसीमें गिरेगा। इस हालत में यदि ये गांधीजी के प्रति हाथ फैलायें, तो उनके मित्र के नाते उनका वही हाथ पकड़ना उनका कर्तव्य था। परन्तु काफी लोग गांधीजी की हँसी उड़ाते थे। पश्चिमी जनता को खुश करने के लिए वहाँ के पत्रकार काल्पनिक बातें लिखा करते थे।

कभी-कभी वे गांधीजी को भ्रातृभाव का नेता बताते, कभी काँच के वृक्ष पर रहनेवाला फकीर कहते और कभी राक्षस, चोर या बूढ़ा। कुछ लोग ऐसा भी समझते थे कि विलायत का दुःख देखने में उन्हें सुख है। वे खुद विलायत की पीठ पर कुल्हाड़ी चलाने को तत्पर हैं, वे हिन्दुस्तान में विलायत के बदले किसी दूसरे देश का राज्य देखना चाहते हैं। मसलन जापान का, याने एक बुराई से बचने के लिए दूसरी बड़ी बुराई में फँसने को वे तैयार हैं।

सच्ची बात तो बहुत सीधी थी। गांधीजी अपने को न सन्त मानते थे, न पैगम्बर। वे अपने को केवल एक सीधा-सादा आदमी मानते थे, जो अपने देश के हित के लिए यत्न कर रहा था; लेकिन अन्य लोग ऐसा क्यों मानते?

गांधीजी ने कांग्रेस को सत्याग्रह की तैयारी करने की चेतावनी दी। वे सत्याग्रहियों की अजेय सेना को तैयार करना चाहते थे।

पहले-पहल उन्होंने अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए नहीं कहा। उन्होंने केवल इतना ही कहा कि अंग्रेज सरकार अपना सारा भार एक राष्ट्रीय सरकार को सौंप दे।

'हरिजन सेवक' में गांधीजी ने जापानियों को तानाशाही और प्रजातन्त्र के विचार समझाये। चीन पर किये गये हमले और जर्मनी से की गयी सन्धि की उन्होंने निन्दा की। इसके साथ-साथ उन्होंने साफ चेतावनी दी कि यदि वे कभी हिन्दुस्तान पर हमला करेंगे, तो सबसे पहले वे उनके विरुद्ध सत्याग्रह चलायेंगे। उन्होंने कहा कि हमला करनेवालों की सहायता करना हमला भुगतनेवालों का कर्तव्य कतई नहीं है। बल्कि उसके विपरीत देशभक्त का कर्तव्य सहयोग देने से इनकार करना है।

कांग्रेस के सामने गांधीजी ने निम्न मांगें पेश कीं :

(अ) हमला करनेवालों की बातों को कदापि न मानना चाहिए।

(आ) उनसे न कोई मदद ली जाय और न उनका कोई पुरस्कार ही स्वीकार किया जाय।

(इ) अपने-आप अपने खेत का कब्जा उनके हाथ में कतई नहीं देना चाहिए।

(ई) यदि वे लोग बीमार हों या प्यासे हों, तो उन्हें सहायता दे देनी चाहिए।

अन्तिम कारावास

९ अगस्त १९४२ को अंग्रेज सरकार ने फिर गांधीजी को गिरफ्तार कर लिया। उनकी पत्नी कस्तूरबा और कुछ अन्य मित्र भी उनके साथ में रहे।

जेल में गांधीजी की पत्नी कस्तूरबा का देहावसान हुआ था, लेकिन मरते दम तक उन्होंने कभी अंग्रेजों के विरुद्ध एक शब्द न निकाला।

आजाद हिन्द फौज

डेढ़ वर्ष जेल में रहने के उपरान्त गांधीजी की रिहाई हुई। लड़ाई अब तक जारी थी। श्री सुभाषचन्द्र बसु ने 'आजाद हिन्द फौज' की स्थापना की थी। वे जापान को मदद देकर स्वराज्य लेना चाहते थे। आजाद हिन्द फौज के सिपाहियों ने बड़ी बहादुरी के साथ भारी कष्टों का सामना किया। लड़ाई के बाद जब वे लौटे, तो सारे देश में उनका खूब शानदार स्वागत हुआ था। लेकिन गांधीजी उस अन्धी भावुकता में शामिल न हो सके। उस फौज के सैनिकों की हिम्मत, बलिदान और देशभक्ति की प्रशंसा करते हुए भी वे उनके तरीके का समर्थन नहीं कर सके। उनका तरीका उस पद्धति के विरुद्ध था, जो पचीस वर्ष से ही उनकी और कांग्रेस की नीति रही थी।

सत्याग्रही का कर्तव्य

यदि हम सत्याग्रही याने स्थिर बुद्धि का आदर्श अपनाते हैं, तब हम किसीको अपना दुश्मन नहीं समझ सकते हैं। हमें प्रतिक्षण अपने मन से शत्रुता तथा द्वेष का भाव निकालना चाहिए। यह आदर्श सिर्फ थोड़े-से महात्माओं के लिए नहीं, बल्कि हर साधारण व्यक्ति के लिए भी आवश्यक है।

फिनिक्स-आश्रम में गांधीजी ने भंगी की झाड़ू और बाल्टी इसलिए पकड़ी कि वे नीच से नीच माने जानेवाले के साथ अपनी एकता साबित कर सकें। वे उदाहरण द्वारा दिखाना चाहते थे कि कोई भी किसान या मजदूर, चाहे वह अनपढ़ ही क्यों न हो, यदि वह सच्चा हो, सीधा हो, तो वह गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ की परिस्थिति को पा सकता है। न उसे कभी क्रोध आयेगा, न वह कभी किसीको गाली देगा।

उन नौजवान सैनिकों के साथ बहस करने से गांधीजी को खुशी होती थी। गांधीजी उनका प्रेम देखकर भी गद्गद होते थे। वे एक-दूसरे की देश-भक्ति को अच्छी तरह समझते थे।

गांधीजी सुभाष बसु को अपने पुत्र की तरह मानते थे। आजाद हिन्द फौज को उन्होंने यह अन्तिम संदेश दिया :

"तुम जब तक विदेश में थे, तब तक तुम्हें सशस्त्र युद्ध करना पड़ा; लेकिन हिन्दुस्तान लौटकर तुम्हें अहिंसा का सैनिक बनना पड़ेगा और कांग्रेस के अनुशासन में काम करना पड़ेगा।"

यद्यपि ये सिपाही अपने असली लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाये, फिर भी उनका काम काफी अच्छा रहा। वे हिन्दुस्तान के सब धर्मों में एकता की भावना ला सके, यह उनकी सबसे बड़ी सफलता रही। उनमें आपस में किसी प्रकार की भेद-भावना नहीं थी।

गांधीजी उन सिपाहियों को समझाते थे कि "तलवार की अपेक्षा अहिंसा में कई गुनी अधिक शक्ति है।" उन्होंने इस बात को खुशी से स्वीकार किया कि भविष्य में वे कांग्रेस के साथ मिलकर हिन्दुस्तान के सच्चे सेवक बनेंगे।

मुसलिम लीग की स्थापना

खिलाफत के दिनों में जो एकता कायम हुई थी, वह एकता थोड़े ही दिनों तक कायम रह सकी। धीरे-धीरे कुछ मुसलमान नेता सारे राष्ट्र के हित में और अपनी कौम के हित में अन्तर मानने लगे। उन्होंने कांग्रेस से अलग 'मुसलिम लीग' नाम का एक राजनीतिक दल बनाया। मुसलिम लीग के नेताओं ने प्रत्येक काम में कांग्रेस के विरुद्ध अंग्रेज सरकार की सहायता करना शुरू कर दिया, जिससे साम्प्रदायिक भावना फैलने लगी। फिर भी काफी मुसलमान गांधीजी के प्रत्येक कार्य में सहयोग देते रहे।

धीरे-धीरे सारे देश में साम्प्रदायिकता का जहर फैलने लगा। और ऐसी जगहों में, जहाँ बहुधा भाई-भाई की तरह लोग रहते थे और एक-दूसरे के उत्सवों, जलसों में मिलते और शामिल होते थे, वहाँ भी साम्प्रदायिक दंगे होने लगे। परिस्थिति बिगड़ती गयी। मुसलिम लीग ने अंग्रेज सरकार को यह दिखाने की

कोशिश की कि मुसलमान लोग हिन्दुस्तान में अल्प संख्या में सुरक्षित रह नहीं सकते हैं।

स्वराज्य का सौदा

जब उन्हें यह मालूम हुआ कि अब सचमुच स्वराज्य मिलनेवाला है, तब उन्होंने खास तौर से हिन्दुस्तान के विभाजन की और एक अलग राष्ट्र 'पाकिस्तान' के निर्माण की माँग की।

इस उद्देश्य से बंगाल में बहुत बड़े पैमाने पर दंगे होने शुरू हुए। नोआखाली के इलाके में परिस्थिति इतनी खतरनाक हुई कि गांधीजी को अपने साथियों को लेकर वहाँ जाना पड़ा। उस हत्याकाण्ड के बीच में गांधीजी ने 'करो या मरो' का नारा लेकर अपने कार्यकर्ताओं को अलग-अलग शान्ति-स्थापना के हेतु गाँवों में भेज दिया तथा वे स्वयं उस जंगली इलाके में एक भाई और एक छोटी बहन के साथ घूमने लगे। वहाँ पर कितने ही गाँव जलाये गये थे। कहीं हड्डी पड़ी थी, कहीं लाश। कितने ही लोग भूखों मर रहे थे। किसीके घर में अकेली बहन रह गयी थी, तो किसीके घर कोई छोटा-सा बच्चा!

बापू पर इन सब करुण दृश्यों का गहरा असर पड़ा।

जब गांधीजी ने एक स्थान में न रहकर घूमते रहने का निश्चय किया, तब कार्यकर्ताओं ने उनके लिए एक मोड़नेवाली झोपड़ी बनायी। लेकिन उन्होंने उसका उपयोग नहीं किया। उसको पहले गाँव में दवाखाने के लिए छोड़ दिया।

भारतवर्ष का विभाजन हुआ। 'हिन्दुस्तान' और 'पाकिस्तान' नाम से दो अलग-अलग राष्ट्रों की स्थापना हुई। गांधीजी भला किस प्रकार इस चीर-फाड़ को पसन्द कर सकते थे? इस बात से गांधीजी को इतना दुःख हुआ कि उन्होंने कहा कि इससे अच्छा तो यह होता कि स्वराज्य स्थगित हो जाय। इसमें भविष्य की बदनामी के लिए कम खतरा है। गांधीजी ने मुहम्मद अली जिन्ना को यह सुझाव दिया कि हिन्दुस्तान एक उपनिवेश रहे और वे ही ब्रिटिश मित्र-संघ के अन्दर प्रथम राष्ट्रपति बनें।

बड़े खेद की बात यह हुई कि जहाँ लगभग सभी हिन्दू नेता समझौते के लिए इच्छुक थे और इसके लिए वे काफी झुकने के लिए भी तैयार थे, वहाँ मुसलिम लीगी नेता कतई नहीं माने। अन्त में 'पाकिस्तान' की स्थापना हो ही गयी।

सुख या दुःख?

१५ अगस्त १९४७ स्वतन्त्रता का शुभ दिन निश्चित

हुआ था। लोगों को शंका हुई कि नोआखाली में फिर न कहीं दंगा शुरू हो जाय। गांधीजी शान्ति-स्थापना हेतु कश्मीर और पञ्जाब गये हुए थे। उन्होंने पहले से ही निश्चय कर लिया था कि उन्हें १५ अगस्त को नोआखाली ही रहना है। लौटते समय वे एक दिन के लिए पटना में रुके। वहाँ पर उन्होंने लोगों से कहा : "यह स्वराज्य ऐसा नहीं कि हम रोशनी करें, खुशी मनायें। आज हमारे पास अनाज, कपड़े, घी, तेल कहाँ है? इसलिए हम उत्सव कैसे मनायें? उस दिन तो उपवास, कताई तथा ईश्वर-प्रार्थना का ही कार्यक्रम ठीक होगा। आजकल भाई भाई पर गुर्राकर दौड़ता है। भाई भाई का गला काटता है। सब लोग अपने मन्दिर और मसजिद में खुशी-खुशी नहीं जा सकते हैं।"

नंगे पैर नोआखाली में

९ अगस्त को गांधीजी सोदपुर पहुँचे। कलकत्ते से दोनों कौमों के नेता उनसे यह प्रार्थना करने आये कि वे नोआखाली न जाकर १५ अगस्त के लिए कलकत्ते में ही रहें। वहाँ की परिस्थिति बड़ी खतरनाक है, ऐसा वे बता रहे थे।

कलकत्ते के चमत्कार

लेकिन गांधीजी नोआखाली छोड़ने को तैयार

नहीं थे। जब मुसलमान नेताओं ने स्वयं वहाँ की शान्ति की जिम्मेदारी ली, तब उन्होंने इस शर्त पर कलकत्ते में रुकना स्वीकार किया कि प्रमुख लीगी नेता शहीद सुहरावर्दी उनके साथ रहें, वे एक साथ मुलाकातें देते रहें और दोनों किसीके साथ एक-दूसरे के बिना गुप्त बात न करें। ऐसा माना जाता था कि पिछले साल के दंगों में शहीद साहब का काफी बड़ा हाथ था। ये दोनों मिलकर एक ऐसे मकान में जाकर रहने लगे थे, जो बहुत खतरनाक स्थान माना जाता था। वहाँ पिछले साल तक एक भी आदमी जिन्दा न रहता था। गांधीजी ने १३ अगस्त को उस मकान में प्रवेश किया।

उस समय भले ही कलकत्ते में ऊपरी शान्ति दीखती थी, पर बहुत-सी ऐसी जगहें थीं, जहाँ मुसलमानों को जाने की हिम्मत न होती थी। ऐसी भी बहुत-सी जगहें थीं, जहाँ हिन्दुओं को जाने की हिम्मत न थी।

बापू के उस मकान में पहुँचते ही कुछ हिन्दू नौजवान उनसे झगड़ने आये। वे कहते थे कि आजकल बापू हिन्दुओं के दुश्मन बन गये हैं। कई घण्टों के बाद जब बापू ने उनसे कहा कि "मैं कर्म से, धर्म से, नाम से हिन्दू हूँ", तब अन्त में वे शान्त होकर चले गये। प्रार्थना में प्रतिदिन बापू और सुहरावर्दी दोनों के प्रवचन होने लगे। उसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों बड़ी संख्या में आने

लगे थे। इसका जादू जैसा असर पड़ने लगा। हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरे को गले लगाने लगे थे, लारियों में साथ-साथ घूमकर प्रसन्नता से 'हिन्दू-मुसलिम भाई-भाई' का नारा लगाने लगे।

१५ अगस्त बड़ी खुशी से मनाया गया। जनता वास्तव में शान्ति और एकता के लिए तरस रही थी। लेकिन १५ अगस्त को पश्चिमी पाकिस्तान में हत्याकाण्ड शुरू हुआ।

इधर कलकत्ते में पश्चिमी पाकिस्तान की घटनाओं से उत्तेजना फैल गयी और पहली सितम्बर से दंगा शुरू हो गया। जब किसी प्रकार परिस्थिति काबू में आने की उम्मीद नहीं दीख रही थी, तब बापू ने उपवास शुरू कर दिया। इससे नेता लोग बहुत चिन्तित हुए। हर दल के नेता गांधीजी के पास आने लगे। हरएक ने अपनी तथा अपने दल की पूरी शक्ति शान्ति-स्थापना में लगाने का वचन दिया। फिर भी लोग नहीं माने। एक-दो दिन तक कत्ल जारी रहा। उसके बाद कत्ल तो बन्द हो गया; पर बड़े पैमाने पर लूट-मार जारी रही।

लेकिन चौथे दिन सुबह गुण्डों की टोली पर टोली बापू के पास आकर उनसे क्षमा माँगने लगी। अपने

हथियार लाकर उन्हें देने लगी और उनसे प्रार्थना करने लगी कि वे अपना अनशन फौरन छोड़ दें।

अन्त में बापू ने इस शर्त पर अपना उपवास तोड़ना स्वीकार किया कि फिर दंगा होने पर सब सम्प्रदायों के नेता सबसे पहले अपने प्राण छोड़ने को तैयार होंगे। सबने इस शर्त पर दस्तखत किये। शाम को सुहरावर्दी के हाथों से बापू ने एक औंस सन्तरे का रस पी लिया। उपवास समाप्त होने से सबको सन्तोष हुआ; क्योंकि उस समय गांधीजी की हालत बहुत नाजुक हो गयी थी।

प्रार्थना-प्रवचन में गांधीजी ने कहा : "मैंने न तो किसीकी खुशामद की और न मैं किसीसे डरा। हाँ, एक ईश्वर से अवश्य डरता हूँ, क्योंकि न्याय करनेवाला सिर्फ वही है और वह हम सबका है। रक्षा के लिए हथियार बेकार हैं। केवल ईश्वर ही हमारी रक्षा कर सकता है। इसलिए हम उससे रक्षा की प्रार्थना करें।"

७ ता० को गांधीजी पञ्जाब के लिए रवाना हुए। गांधीजी और उनके साथियों की तपस्या से नोआखाली में शान्ति स्थापित हुई। लेकिन उसके बाद बिहार में उपद्रव हो गया। तब बापू को वहाँ दौड़ना पड़ा। वहाँ भी जब उन्होंने आमरण अनशन की बात सोची, तो वहाँ भी शान्ति स्थापित हो गयी।

● ● ●

हत्याकाण्ड जारी

: ७ :

दिल्ली में आगमन

९ सितम्बर की शाम को जब गांधीजी दिल्ली पहुँचे, तो सरदार पटेल और अन्य मित्र स्टेशन पर उन्हें लेने आये थे। वे सब गम्भीर दिखाई दे रहे थे। परन्तु गांधीजी की समझ में नहीं आया कि बात क्या है। लेकिन थोड़ी देर में जाहिर हो गया कि दिल्ली में भयंकर दंगे फूट पड़े हैं। उन दंगों में सैकड़ों की संख्या में लोग मरे थे। उनमें हिन्दू भी थे, सिख भी और मुसलमान भी। इससे सारा नगर भयभीत था।

गांधीजी ने अपना डेरा बिड़ला-भवन में डाला। उनके गले की तकलीफ जारी थी और उन्हें बुखार भी आता था। फिर भी वे नगर के दंगे रोकने के लिए जगह-जगह शरणार्थियों के शिविरों में जाने लगे।

पहले दिन उन्होंने जब प्रार्थना शुरू की, तो कहा : "यदि किसीको कुरान की आयतें पाठ करने में एतराज हो, तो मैं सामूहिक प्रार्थना छोड़ दूँगा और मकान के अन्दर अपने साथियों के साथ मिलकर प्रार्थना करूँगा। मैं किसीके दिल को दुखाना नहीं चाहता, लेकिन मैं इन

आयतों को भी छोड़ नहीं सकता।" किसीने एतराज नहीं किया।

उनके प्रार्थना-प्रवचन बड़े मार्मिक होते थे। वे कहते थे कि सभी लोग अपने दिल से भेद-भाव और मनमुटाव हटा दें और हरएक को, फिर वह हिन्दू हो या मुसलमान, सिख हो या पारसी, सच्चा भाई समझें।

शरणार्थियों के शिविरों की हालत अत्यन्त दयनीय थी। धूप, वर्षा, ठण्ड में ये लोग तम्बू में रहते थे या कच्चे झोपड़ों में रहते थे। न उनके लिए ठीक खुराक की व्यवस्था थी और न ओढ़ने-पहनने की। उनके शिविर बहुत गन्दे थे। वहाँ सफाई और आरोग्य का कोई प्रबन्ध नहीं था। साम्प्रदायिक भावनाएँ इतनी तेज थीं कि उनकी सेवा करने में कई कठिनाइयाँ थीं।

गांधीजी हर प्रकार से सबका ध्यान इस करुण दृश्य की ओर खींचते रहे। उनके दुःखभरे आवाहनों की वजह से उन बेचारों को काफी मदद मिलने लगी।

दोनों तरफ से लोग काफी अत्युक्ति किया करते थे। गांधीजी इस सिलसिले में भी सबको चेतावनी देते रहे। वे समझाते रहे कि अत्युक्ति भी एक खतरनाक प्रकार का झूठ है।

पश्चिमी और पूर्वी बंगाल में अत्याचार जारी थे तथा गांधीजी को वहाँ जाने की बड़ी इच्छा थी। लेकिन

अभी तक हिन्दुस्तान की राजधानी दिल्ली में ही शांति नहीं हो पायी थी, इसलिए वहाँ से वे कैसे जाते ?

दिल्ली में कितने ही भाई-बहन गांधीजी से मिलने आया करते थे। इनमें दोनों पञ्जाब के लोग थे। सबके दिलों में द्वेष और अविश्वास भरा था। हिन्दू, मुसलमान और सिख तीनों कौमों में पारस्परिक अविश्वास हो गया था। इसलिए शांति और प्रेम से रहना कठिन हो रहा था। तीनों मजहबों द्वारा स्त्रियों पर अत्याचार हुआ था। इससे वातावरण बड़ा विषैला हो रहा था।

दिल्ली में पुलिस के डर से ऊपरी शांति तो कायम हुई, लेकिन सबके दिलों में अश्रद्धा की आग भभक रही थी।

गांधीजी पहले कहा करते थे कि मैं १२५ वर्ष तक जीवित रहकर देश की सेवा करूँगा। लेकिन अब उन्होंने यह अभिलाषा छोड़ दी और वे बुरी तरह निराश हो गये। वे सोचने लगे कि ईश्वर अब उन्हें जल्दी उठा लेता, तो अच्छा होता ! लोगों के दिल पिघलाने में अब वे अपने को असमर्थ पाने लगे।

गांधीजी समझाते-समझाते निराश होते गये। प्रति-दिन सारे हिन्दुस्तान के लोग रेडियो पर उनके प्रार्थना-प्रवचन सुनते थे। उनकी धीमी-धीमी और करुणाभरी

'भाइयो और बहनो' की आवाज सबके हृदय को स्पर्श करने लगी। जनता भी शांति के लिए तरसने लगी।

इन दिनों देश में कुछ ऐसे अंधे लोग भी थे, जो समझते थे कि हिन्दुस्तान तो हिन्दुओं के लिए है और पाकिस्तान मुसलमानों के लिए तथा इन दोनों के हित परस्परविरोधी हैं। वे मानते थे कि जो लोग पारस्परिक प्रेम और शांति चाहते हैं, वे लोग देश के दुश्मन हैं और देश के असली हित को नहीं समझते हैं। ● ● ○

अन्तिम उपवास : ८ :

यह सारा वातावरण देखकर गांधीजी की निराशा बढ़ती गयी। अन्त में चार दिन के कड़े हृदय-मन्थन के बाद उन्होंने उपवास करने का निश्चय किया। इस निश्चय से उनका दिल हल्का हो गया। उन्होंने कहा :

"जब मेरा सारा पुरुषार्थ और सूझ-बूझ खतम हो गयी और जब मैं लाचार हो गया, तभी मैंने भगवान् की गोद में अपना सिर रखा। यह कहना कि जिन्दा रहकर ही कोई खास काम किया जा सकता है, बेकार है।

"राम मुझे मारता है, तो भी अच्छा होगा और जिलाता है, तो भी अच्छा होगा।"

१२ जनवरी सन् १९४८ को गांधीजी ने प्रार्थना-प्रवचन में निश्चय किया कि वे १३ जनवरी को सुबह से उपवास शुरू करेंगे। उनका यह निश्चय सारे हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के लिए वज्रपात जैसा हुआ। कारण, मुसलमान लोग भी अब यह समझने लगे थे कि 'बापू' उनके सबसे अच्छे मित्र हैं और वे ही उनके प्राण और इज्जत को बचा सकते हैं।

लोगों की प्रार्थना और घबराहट से गांधीजी के दृढ़ निश्चय पर कोई असर नहीं पड़ा और १३ की सुबह उनका उपवास शुरू हुआ।

अब दिल्ली के हर मजहब के नेता अपनी जिम्मेदारी समझने लगे। चारों ओर से दिल्ली-समझौते के लिए प्रयत्न होने लगे। रोज सुबह अपने बिस्तर पर से ही बापूजी प्रेमभरी, मीठी-मीठी अपनी कमजोर आवाज से प्रवचन दिया करते थे और लाउडस्पीकर द्वारा प्रार्थना-सभा में आये हुए लोग उसे सुनते थे।

उनका मुख्य प्रवचन प्रार्थना-स्थल पर पढ़ा जाता था। उपवास में अक्सर उन्हें काफी तकलीफ होती थी, लेकिन अबकी बार उन्हें बहुत कम कष्ट हुआ। मुलाकातें बराबर जारी रहीं। चारों ओर से उपवास छोड़ने के नम्र निवेदन होने लगे, फिर भी उनकी छोटी आन्तरिक आवाज नहीं मान सकी। यह उपवास किसी पर जबर्दस्ती करने के लिए नहीं था, लेकिन इस हार्दिक इच्छा से था कि या तो ईश्वर की प्रेरणा से सबके दिल में शांति और धैर्य पैदा हो या इस दुष्ट वातावरण से ईश्वर उन्हें उठा ले।

"मेरी सबसे यही प्रार्थना है कि लोग शांत चित्त और तटस्थ वृत्ति से विचार करें और अगर मुझे मरना ही है, तो शांति से मरने दें। मैं आशा करता हूँ कि शांति तो मुझे मिलने ही वाली है।

"विवश बनकर हिन्दुस्तान का, हिन्दू-धर्म का, सिख-धर्म का और इसलाम का नाश होते देखने के बनिस्बत मृत्यु मेरे लिए सुन्दर रिहाई होगी...। मेरा उपवास लोगों की आत्मा को जाग्रत करने के लिए है—मार डालने के लिए नहीं।"

१८ ता० को दिल्ली के सब नेता मिलकर गांधीजी के पास आये। ये यह खुशखबरी लाये थे कि आपस में उनका समझौता हुआ है और सबके दिल में पारस्परिक प्रेम और विश्वास पैदा हुआ है।

इस बात को सुनकर गांधीजी को खुशी हुई। लेकिन वे यों ही अपना उपवास छोड़ना नहीं चाहते थे। उन्हें विश्वास नहीं हुआ कि उनका प्यारा राम उन्हें जीवित रखना चाहता है। जब लोगों ने दुबारा आश्वासन दिया कि वे दिल से ही बोल रहे हैं और वे सारे भारत में शांति बनाये रखने का भरसक प्रयत्न करेंगे, तब गांधीजी को खुशी हुई कि अब उपवास छोड़कर उन्हें पञ्जाब जाने का मौका मिलेगा।

हिन्दुस्तानभर में लोगों ने संतोष की साँस ली। हिन्दुस्तान ने एक बार और अपनी मुसीबत को टाल दिया। सत्य और अहिंसा की एक और प्रबल विजय हुई। ● ● ●

उपवास के बाद गांधीजी ने समझा कि अब केवल हिन्दुस्तान में नहीं, केवल पाकिस्तान में नहीं; बल्कि दोनों देशों के बीच में और सारी मुसलिम दुनिया के साथ शान्ति स्थापित करने का मौका आ गया है। उन्हें आशा थी कि उपवास की कमजोरी से अच्छे होने के बाद उन्हें पाकिस्तान जाने का मौका मिलेगा।

हमारे देश में कुछ ऐसे लोग थे, जो समझते थे कि हिन्दू-मुसलिम-समझौता देश के हित के विरुद्ध है।

अतः जहाँ गांधीजी का उपवास समाप्त होने से सारे हिन्दुस्तान, सारे पाकिस्तान और सारी दुनिया से बधाई के तार आ रहे थे, वहाँ ३० जनवरी की शाम को प्रार्थना-सभा में किसीने गांधीजी पर एक बम फेंक दिया। ईश्वर की कृपा से वे बच गये।

२१ ता० के प्रार्थना-प्रवचन में गांधीजी ने कहा : "अगर सामने बम फटे और मैं न डरूँ, तो आप कहेंगे कि गांधी बम से मर गया, तो भी हँसता ही रहा।"

(वैसे ही बहुत वर्ष पहले गांधीजी ने एक मित्र से यह

इच्छा प्रकट की थी कि मैं बिस्तर पर नहीं मरना चाहता; मैं वीरों की मौत मरना चाहता हूँ।)

उस बम फेंकनेवाले के बारे में गांधीजी ने कहा : "ईश्वर उसका भला करें। मैंने इन्स्पेक्टर जनरल से कहा है कि उस आदमी को सताया न जाय, उसका मन जीतने की कोशिश की जाय।"

सरदार पटेल व जवाहरलाल नेहरू ने बहुत आग्रह किया कि अब पुलिस गार्ड के संरक्षण में रहना चाहिए और प्रार्थना-सभा में पुलिस गार्ड रहना चाहिए; लेकिन गांधीजी का विश्वास पुलिस पर नहीं, अपने राम पर था।

कई दिन गांधीजी कांग्रेस की परिस्थिति पर विचार करते रहे। उन्हें ऐसा महसूस हुआ कि राष्ट्रीय कांग्रेस की स्वतन्त्र भारत में अब कोई जरूरत नहीं रह गयी है। बहुत सोच-विचार के बाद उन्होंने राष्ट्रीय कांग्रेस के लिए एक नया विधान बनाया। ३० जनवरी को उन्होंने नये विधान के अन्तिम मसविदे पर अपना हस्ताक्षर किया। संक्षेप में उसका उद्देश्य यह था कि कांग्रेस को अपने को 'लोक-सेवक संघ' में परिवर्तित करके राजनैतिक दल-बन्दी में न फँसकर जनता की शुद्ध और निःस्वार्थ सेवा में लगना चाहिए।

दिनभर हमेशा की भाँति वे अपने कामों में लगे रहे।

कुछ लिखने-पढ़ने का काम भी हुआ, मुलाकातें भी कुछ हुईं।

ठीक पाँच बजे वे बिड़ला-भवन से निकलकर हमेशा की तरह दो बहनों के साथ प्रार्थना-स्थल के लिए निकले।

एक हठधर्मी हिन्दू उन्हें प्रणाम करने के बहाने आगे बढ़ा। गांधीजी हाथ जोड़कर उसे प्रणाम करने लगे। तभी नाथूराम गोडसे ने झट से अपना रिवाल्वर निकालकर गांधीजी की छाती में तीन गोलियाँ मार दीं।

गांधीजी ने 'राम! राम!!" कहा और जमीन पर गिर पड़े। लोग उन्हें उठाकर भीतर ले गये। आधे घण्टे तक बेहोश रहकर वे हमें अनाथ छोड़कर अपने प्यारे राम की गोद में जा पहुँचे।

•

राम! राम!! राम!!!

सर्वोदय तथा भूदान-साहित्य